# कृष्णा-वियोगिनी

[ एकांकी नाटक ]

●

लेखक

हरिनारायण मैणवाल, एम० ए०

सम्पादक : "प्रगतिशील" जयपुर

●

प्रकाशक

इलाहाबाद लॉ जर्नल कं० लि०

इलाहाबाद

प्रथमवार ] १९५३ [ मूल्य १॥)

मुद्रक तथा प्रकाशक
जे० के० शर्मा, इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस, इलाहाबाद

# विषय-सूची

# भूमिका

## मैणवाल के एकांकियों पर एक दृष्टि

[ प्रो० श्री रामचरण महेन्द्र, एम. ए., रिसर्च स्कालर, हर्बर्ट कालिज, कोटा ]

### जीवन का दारुण सत्य और आशा का सन्देश

मैणवालजी मौलिक एकांकी सृजन की प्रतिभा लेकर हिन्दी एकाकी के क्षेत्र मे प्रविष्ट हुए है। यद्यपि आप पाश्चात्य टेकनिक से प्रभावित है, किन्तु आपने अपने पथ का निर्धारण करने मे किसी भी पाश्चात्य एकाकीकार का अनुकरण नही किया है। ऐतिहासिक एव पौराणिक एकांकियो मे भी आपने निज-कल्पना और प्रतिभा के स्पर्श से नवीनता की सृष्टि की है। आपकी कल्पना और अनुभव के आधार पर खडे होने वाले सामाजिक एव प्रचारात्मक एकाकियो के सम्बन्ध मे तो कोई प्रश्न ही नही उठता। उनका आधार ठोस जीवन है। यहाँ भारतीय जन-समाज के कठोर जीवन की निर्मम झाँकी हमे दी गई है। इन एकाकियो मे जीवन का दारुण सत्य है, साथ ही आशा का सन्देश भी।

## 'प्रसाद' का प्रभाव

मैणवालजी के प्रारंभिक एकांकियो पर "प्रसाद" का प्रभाव स्पष्ट है। "प्रसाद" की नाटच-पद्धति की कहानियो के नाटकत्व तथा भाषा की रूपमाधुरी, जिन्दादिली, संस्कृति-प्रेम का प्रभाव कही-कही मुखरित हो गया है। हार्डी (Thomas Hardy) का दुखवाद कही-कही आपकी विचारधारा को स्पर्श करता है, किन्तु "प्रसाद"-साहित्य के अनुशीलन की प्रतिक्रिया ने आपको हिन्दी-नाटच ससार मे एक आदर्शोन्मुख आशावादी व्यक्तित्व बना दिया है। यही कारण है कि आपके करुण और दुखान्त एकांकियो मे भी आशा की स्वर्ण-रेख चमकती है।

## पद्धति एवं टेकनिक

टेकनिक की दृष्टि से मैणवालजी का योग चिरस्मरणीय है। अँग्रेजी पद्धति के अनुसार आप कई दृश्य वाले तथा अधिक पात्रो वाले लम्बे-लम्बे विचार या मत-विशेष के प्रतिपादन से बोझिल एकांकियो की अपेक्षा एक दृश्य तथा कम पात्रो वाले एकांकी, लिखना अधिक पसन्द करते हैं। छोटे, किन्तु सम्वेदना की तीव्रता सम्हाले हुए तीखे एकांकियो का निर्माण करना आपकी विशेषता है। आप दो-तीन पात्रो की सहायता से एक ही स्थान पर, उसी समय घटनाओ को जोड-तोड कर चरित्र की किसी विशेष वृत्ति एव मनो-

दशा का मनोवैज्ञानिक ढग से प्रतिपादन कर देते हैं। ऐसे एकांकीकार को तीव्र सम्वेदना (Acute Sensation) और प्रभाव की ऋजुता का भी पूरा-पूरा ध्यान रहता है; क्योंकि प्रधानत. इन्ही मूल तत्त्वों पर उसकी सफलता या असफलता आँकी जा सकती है।'

## मौलिक भाव और मधुर अनुभूतियाँ

मैणवाल्जी की मनोवृत्ति मनोवैज्ञानिक है। अपने पौराणिक और ऐतिहासिक नाटकों मे भी कथानक पुराना

---

[1]"मै उस समय का स्वप्न देखता हूँ, जब भारतवासी बेरोजगार, अकर्मण्य, आलसी नहीं रहेंगे। एक दिन भारत रूस और अमेरिका के समान उन्नत और समृद्धिशाली होगा और भारतवासियो को एक क्षण का भी अवकाश नही मिलेगा। राष्ट्र के सम्मुख काम ज्यादा होगा तथा मानव कम रहेंगे। ऐसे युग में देशवासियो को रामायण, महाभारत जैसे विशाल ग्रन्थ, या लम्बे उपन्यास, नाटक इत्यादि को पढ़ने का समय कहाँ मिलेगा ? ऐसे नितान्त व्यावहारिक जीवन को कदाचित् ये कुछ ही क्षणो में मजा-चखाने वाले एकांकी ज्यादा पसन्द होंगे। ऐसे भौतिकवादी एवं यथार्थवादी जीवन में ये एकांकी अतीत संस्कृति का सन्देश सुनाने में सफल हो सकेंगे। अपने भावी एकांकियों में मै कुछ ही क्षणों में पूर्ण आनन्द देने का प्रयास करूँगा"—हरिनारायण मैणवाल (पत्र से)

होते हुए भी आपने मौलिक भाव और मधुर अनुभूतियाँ भर दी हैं। उनमे नए प्राण आ गये हैं। मनोवैज्ञानिक पद्धति पर प्रसूत "कृष्णवियोगिनी" भावव्यजना तथा शैली मे चिर नवीन है। अनुभूति की सूक्ष्मता मार्मिक ढग से व्यक्त हुई हैं। अनुभूति के भावात्मक होने के कारण कल्पना का सुचारु उपयोग हुआ है। गूढ आत्मानुभूति का करुणात्मक और नाटकीय निवेदन कितना भावमय हो सकता है, इसका सफल प्रमाण "कृष्ण-वियोगिनी" का अन्तिम वक्तव्य है, जहाँ प्रमादनी राधा का चित्रण किया गया है। आपकी केवल अनुभूति ही तरल नही, उसके पीछे बौद्धिक तत्त्व भी है। आपके समस्या नाटकों मे यह ठोस बौद्धिक तत्त्व नाना रूप ग्रहण कर हमारे समक्ष उपस्थित होता है। इन नाटकों मे आपने समाज के भीतरी पर्व फाड कर दारुण अत्याचार और समाज की भग्न-जीर्ण अट्टालिकाएँ दिखाई है।

"प्रसाद" का प्रभाव दो रूपो मे मूर्त हो उठा है (१) विचारधारा मे भारतीय गौरव, सस्कृति एव भावात्मक आदर्शवाद। इन एकाकियो मे विचार-गौरव तथा प्राचीन आर्य-संस्कृति के सम्बन्ध मे भावात्मक विवेचना है। नाटचकार ने भारतीय सस्कृति के प्रतीक सांस्कृतिक-पौराणिक कथानको को चुना है।

"प्रतिज्ञा", "शत्रु से प्रेम", "पर्जन्य-यज्ञ", "पितृ-भक्त"—मे प्रसाद के नाटको वाली पद्धति स्पष्ट है।

वही समाज की प्रवृत्तियों का सूक्ष्म निरीक्षण, मनोवैज्ञानिक चित्रण, सरसता के लिये मधुर गीतो की योजना, सास्कृतिक एव भारतीय हिन्दू इतिहास के कथानक, गुरु-गभीर सस्कृत-मयी भाषा के प्रयोग, स्वगत इत्यादि। सास्कृतिक नाटको मे प्रौढता, रस और सगीत का अपूर्व सम्मिश्रण है।

## 'मैणवाल' की विशेषता

अभी हिन्दी साहित्य मे ऐसे एकाकियो की कमी है, जो तीव्र सम्वेदना, ( Acute Sensation ) प्रभाव की ऋजुता, आकस्मिकता, गोपन-व्यजना आदि कहानी के-से तत्त्वो को रखते हुए केवल एक दृश्य से अधिक की कामना नही रखते। एक दृश्य मे ही वे भरपूर और अपने आपमे हर प्रकार पूर्ण होते है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए मैणवालजी एकाकी-क्षेत्र मे अग्रसर हुए है। यही इनकी विशेषता है।

आपके एकाकियो को तीन भागो मे विभाजित किया जा सकता है :—

## (१) सामाजिक-समस्या-एकांकी

(१) सौभाग्य-सिन्दूर (२) मोटर साइकिल (३) गरीब का ससार (४) सहशिक्षा (५) नेताजी और आजाद हिन्द फौज (६) गृहस्थी (७) साथी (८) ताड़-गुड (९) कौसिलर।

## (२) सांस्कृतिक-पौराणिक आदर्शवाद

(१) प्रतिज्ञा (२) शत्रु से प्रेम (३) पर्जन्य यज्ञ (४) -गुरु-दक्षिणा (५) पितृ-भक्त (६) कृष्ण-वियोगिनी—

## ऐतिहासिक

(१) खुसरु की आँखे।

## समस्या-एकांकी

श्री मैणवाल के सामाजिक समस्या-नाटको मे नाना समस्याएँ उभारी गई है। निष्पक्ष आलोचक की दृष्टि से वे इनका चित्रण कर देते है, समस्या के मुलभाव के संकेत भी कर देते हैं, किन्तु स्पष्ट नही कहते। समाज का पर्दाफाश कर वे हमे प्रताडित वर्ग की एक झाँकी प्रस्तुत कर देते है, जैसे हमसे कहते हो, "समाज का रुपहला कृत्रिम स्वरूप तो आप देखते ही है, युगो-युगो से उसके अन्तराल मे संचित इस कड़वाहट और विद्रूपता को भी आपने देखा है?" पूँजीवाद के विरुद्ध आपने आवाज़ ऊँची की है। आज मध्यवर्ग के करोडो गृहस्थ मँहगाई और झूठा दिखावा की चक्की के दो पाटो मे निर्ममता से पीसे जा रहे है। उनका स्वर आप मुखरित कर सके है। समाज में जो Exploitation, चल रहा है, उसका चित्रण इन एकाकियों मे उपलब्ध है।

जिन समस्याओं को आपने अपने एकाकियों का विषय बनाया है, उनमें से ये प्रमुख हैं —विधवाओं की दुर्दशा, पूँजीवाद के अत्याचार, किराया, मँहगाई, मध्यवर्ग का उत्पीड़न, आधुनिक सहशिक्षा की खराबियाँ, उच्च क्षेत्रों के भ्रष्टाचार, सार्वजनिक कार्यकर्ताओं की दुर्बलताएँ, ग़रीबी की असमर्थता, भयकरता, इत्यादि। ऐतिहासिक नाटकों में मुस्लिम संस्कृति तथा मुगल साम्राज्य की समस्याएँ, हिन्दू-मुस्लिम एकता का न होना, मुगलकालीन राजाओं के पारस्परिक विद्वेष-षडयंत्र को समझाने का प्रयत्न किया गया है। पौराणिक नाटकों में अतीत भारतीय सांस्कृतिक उच्चता की ओजपूर्ण झाँकी प्रस्तुत की गई है। "खुसरु की आँखें" में नाट्यकार ने अकबर की वेदनाओं, जटिल समस्याओं, सम्राट के घात-प्रतिघातों को मुखरित किया है।

## गृहस्थी

"गृहस्थी" एक प्रगतिशील एकाकी है, जिसमें नाट्यकार ने आधुनिक मध्यवर्ग के नौकरी-पेशा के जीवन का एक यथार्थवादी चित्र प्रस्तुत किया है। दिन भर कार्य करने के पश्चात् वह १५०) कमाता है, जिसमें कठिनता से घर का व्यय चलता है। कर्ज़ बढ़ता है, किराया, दूध के पैसे भी नहीं दे पाता, धनवान के बच्चे उसके बच्चों को चिढ़ाते

है। इस नाटक के गमभरासे उन मध्यम श्रेणी के गृहस्थों का प्रतिनिधित्व करते है, जो मँहगाई, रिश्तेदारी, बाहरी टीपटाप, अफसरों के अन्याचारों और सामान्य गृहस्थी की जरूरतें भी पूर्ण नही कर पाते। यह मध्यम श्रेणी के एक गृहस्थी का चित्र है।

कुछ समस्याओ की ओर निर्देश निम्न वक्तव्यों मे देखिये :—

"यह सन् १९४९ है। एक सामान्य गृहस्थ तलवार की धार पर से गुजर रहा है। नौकरी बहुत बुरी चीज है। धनवान गरीब की सदैव हड्डियां चूसने को प्रस्तुत है, अफसर सदा मातहत का दिल दुखाने मे अपना गौरव समझता है।"

"धनवान के बच्चे तक दुष्ट होते है। वे अपनी समृद्धि बता कर गरीब के बालको को बार-बार चिढाते है। इससे दीन बालको की आत्मा निर्बल हो जाती है, उनका आगे जाकर साहस टूट जाता है।"

गरीबो का रक्त-शोषण करने वालो के विरुद्ध लेखक की पुकार निम्न शब्दो मे व्यक्त हुई है —

"जी चाहता है इन भूखे व्याघ्रो की लाशे कर दूं, खून की नदियाँ बहा दूं और अन्त मे जेल के सीखचों में बन्द होकर सड़-सड कर मर जाऊँ या हम सब एक साथ आत्म-हत्या कर ले। पढा-लिखा हूँ, दिमाग रखता हूँ,

शरीर काम करना चाहता है, मरता हूँ, पचता हूँ, पर, फिर भी पेट खाली है। बालक बिलख कर रह जाते है, स्त्री मन मार कर पत्थर-सी हो गई है और जीवन निरस है। फिर, ऐसे जीवन से कौन-सा लाभ होगा ?

## सहशिक्षा

"आधुनिक सहशिक्षा" मे वयस्क लडके-लडकियों की सहशिक्षा के प्रश्न को उठाया गया है। प्राय छोटी-छोटी बातो पर लड़के-लडकियो मे कटुता और सघर्ष चलता है। लड़कियाँ छोटी-छोटी बातो की शिकायते करती है। भारत मे लडके और लडकियो के इस सघर्ष की समस्या का हल नाटचकार ने इन शब्दो मे किया है :—

"भारतीय लडकियाँ सहशिक्षा के अयोग्य है। सहशिक्षा पाश्चात्य सभ्यता की एक देन है। जब तक लडकियाँ पाश्चात्य महिलाओ की तरह झूठी लज्जा को त्याग कर स्वय को निडर नही बना लेगी, तब तक सहशिक्षा का सफल होना कठिन ही नही असभव है....स्त्री-पुरुष का भेद भूल कर लड़कियो को लडको के वातावरण मे घुल जाना चाहिए।

"सुन्दर एव अप्राप्य वस्तु मे आकर्षण होता है, किन्तु जब वह वस्तु सदा समीप रहने लगती है, तो आकर्षण की वह तीव्र मात्रा क्रमश स्वत. ही मिट जाती है। दूसरा

प्रभाव चरित्र एव व्यक्तित्व का पड़ता है, जिनकी क्षमता के विरुद्ध पुरुष तो क्या देवता भी नहीं ठहर सकते। सीता के पावन चरित्र ने रावण की पापात्मा को परास्त किया; इसी प्रकार सावित्री, द्रोपदी और पद्मिनी आदि भारतीय ललनाओं ने अपनी पवित्र चरित्र-शक्ति के परिचय दिये है....।"

नाट्यकार का उद्देश्य यही हृदय-परिवर्तन दिखाना है। जब तक लड़के लडकियो का हृदय-परिवर्तन नहीं होता, तब तक यह समस्या नही सुलझ सकती। यदि लडकियाँ चाहती हैं कि वे लडकों के साथ बैठ कर शिक्षा प्राप्त करे, तो उन्हे प्रथम स्वयं को सहशिक्षा के योग्य बनाना होगा।

## साथी

"साथी" (१९५०) मे जेल की चारदीवारी के अन्दर होने वाले अत्याचार के साथ दो कैदियो की आप-बीती, भारत के १९४९-५० के राजनैतिक, सामाजिक और नैतिक वातावरण को चित्रित किया है। दो कैदी, एक स्त्री, दूसरा पुरुष, जेल की चार दीवारी के भीतर ही एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते है, प्रेम का अकुर फूटता है, किन्तु क्रूर जेलर द्वारा कुचल दिया जाता है। इस एकांकी का नायक एक राजद्रोही है। उसके कैद होने का कारण उसी से सुनिये। भारत को आज़ादी मिलने के बाद की राजनैतिक अवस्था का इससे सही अनुमान हो सकता है:—

"साथी—भूल से समझ बैठा था कि आज़ादी मिल गई है। विचार-स्वतन्त्रता और सत्य की बेड़ियाँ काट कर गरीबो की आवाज बुलन्द करने लगा। हड़तालें हुई; मिल ठप्प थी, रेलो के चक्के जाम हो गये और जनता की बुलन्द आवाज से आकाश फटने लगा। अवसरवादी सफेदपोश घबरा उठे, उनकी कुर्सियाँ उलटने लगी। और, मोटे पेट का पानी सूखने लगा। बस, फिर क्या था, अँग्रेज़ो जैसा दमन-चक्र चला, विचार-स्वतन्त्रता का गला घोट दिया गया और सत्य के हाथो मे हथकड़ियाँ और पैरो मे बेड़ियाँ डाल दी गई। . मैं एक भयकर राजद्रोही हूँ।"

## ताड़-गुड़

"ताड़-गुड़" (१९५०) प्रचार की चीज़ है, जिसमे ताड़-गुड की उपयोगिता, महत्त्व, लाभो को नाटकत्व प्रदान कर दिया गया है। इसका प्रधान पात्र सम्पादक कहता है—

"ताड-गुड-उद्योग अधिक अन्न उपजाओ आन्दोलन का सहायक है। गन्ने की काश्त पर ताड-गुड़ उद्योग का सीधा प्रभाव यह पड़ेगा कि किसान खेतो मे गन्ना बोने के

-वजाय, अन्न उत्पन्न करेंगे, क्यों कि आजकल हजारों एकड़ उपजाऊ जमीन गन्ने की काश्त ही घेर लेती है। ज्यों-ज्यों ताड-गुड उद्योग बढेगा, त्यों-त्यों गन्ने की काश्त घटेगी और ज्यादा अन्न उत्पन्न होगा . गन्ने के उगाने में, सींचने में, काटने में, पेलने में और रक्षा करने में बीसों झंझट करने पड़ते है। वह तो किसान के खून का पानी बना देता है, पर खजूर के पेड लाखों की संख्या में खड़े है . ये खजूर के वृक्ष राजस्थान की मरुभूमि में अमृत देंगे।"

इस एकांकी में योजनाओं की सफलता अच्छे कार्य-कर्ताओं के ऊपर निर्भर है, इस तत्त्व को स्पष्ट कर दिया गया है।

## कौंसिलर

"कौंसिलर" में एक आदर्शवादी नवयुवक म्यूनिसिपल कौंसिलर का चित्र है। म्यूनिसिपैलिटी में जो रिश्वत, अत्याचार और लूटने का वातावरण रहता है, उसका चित्रण करना लेखक का उद्देश्य है। इसमें पं० विश्वेश्वर के रूप में जन-सेवक के आदर्श की प्रतिष्ठा की गई है। वह त्यागमय होकर आदर्श हो गया है। इसमें हम उनके चरित्र की निष्ठा, बलिदान, सचाई और कठिनाइयों, परिस्थितियों की भीषणता देखते है। पं० विश्वेश्वर रिश्वतों के प्रलोभनों से बचते हुए त्याग और जन-सेवा

के मार्ग पर अटल बने रहते हैं। यह चित्र कर्तृत्व की प्रेरणा के लिए चित्रित किया गया है। यथार्थवादी आदर्श का उत्कृष्ट उदाहरण है। यही प्रवृत्ति विश्वेश्वर के समस्त वक्तव्यों मे परिलक्षित होती है :—जैसे—

"क्या आप चाहते हैं कि मै अपना ईमान कुछ चाँदी के टुकड़ों मे बेच दूँ; जिनकी सेवा करने को खडा हुआ हूँ, उन पर ही जुर्म करूँ और अपने स्वार्थ के लिए अपनी आत्मा को धोखा देने लगूँ। सचाई और ईमान पर चलने वालो की दशा तो सदा खराब रहती है, पर उनका सिर सदा ऊँचा रहता है। यदि परिस्थिति को अपने अनुकूल न बना सका, तो मै इस क्षेत्र से दूर हो जाऊँगा। पर, मुझे पूरा भरोसा है कि अन्तिम विजय सत्य की ही होगी।"

मै अपना कर्त्तव्य-पालन कर रहा हूँ और भगवान् मेरी परीक्षा ले रहे हैं। सच्चे लोक-सेवकों, निस्वार्थी कार्यकर्त्ताओ और होनहार लेखको के मूल्य को अभी हमारे राष्ट्र ने नही पहिचाना है।"

घर-गृहस्थी तथा ससार की विषमताओ मे पिसता हुआ भी विश्वेश्वर अपने आदर्श के लिए युद्ध करता है। उसका आदर्शवाद यथार्थवाद के भीतर से ही पनपता है। अवसाद के साथ ही आशा की एक पतली रेखा उसके जीवन-दर्शन में वर्तमान है।

## ग़रीब का संसार

"गरीब का ससार" में एक निर्धन आत्म-सम्मानी विद्यार्थी के बलिदान, हृदयहीनता, और अवसाद-पूर्ण क्षणो की एक झाँकी है। दीनानाथ के ये शब्द कितने भव्य है—

"मै ग़रीब अवश्य हूँ, परन्तु गरीब की आत्मा पूँजीपतियों की आत्मा से अधिक बलवान होती है। इस प्रकार शिक्षा के आधार पर मै दीनता से कब तक युद्ध करता रहूँगा? मैंने अपने स्वाभिमान को अभी नही बेचा है।"

ग़रीबी की चक्की मे दीनानाथ और उसकी माँ पिस जाते है, लक्ष्मी के पुजारी उनकी पतितावस्था पर हँसी करते है, उन्हे घृणा की वस्तु समझते है। गरीबो की हड्डियाँ चूसने वाले हृदयहीनो का बडा मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया गया है। पूँजीवाद के विरुद्ध नाट्यकार के हृदयमें जो अग्नि है, वह यहाँ सुलग उठी है।

## सौभाग्य-सिन्दूर

"सौभाग्य-सिन्दूर" हिन्दू समाज मे विधवा की पतितावस्था पर आधारित है। वैधव्य जीवन किस प्रकार अभिशाप बन जाता है; प्रकृति आकर्षण की ओर खीचती है, मन में रस का उफान रहता है, किन्तु यह सब हृदय ही हृदय मे कुचला जाने के लिए होता है। विधवा की

अवसादपूर्ण गाथा इस एकाकी मे भर दी गई है। लोक-समाज की आलोचना की पद्धति का भी इसमे चित्रण किया गया है।

## निष्पक्ष सामाजिक आलोचना

मैणवालजी ने समाज के गलित अगो की ओर सफलता-पूर्वक निर्देश किया है। आप सामाजिक विद्रूपताओ की ओर निर्देश भर कर देते है। सामाजिक विषमताओ का यथातथ्य वर्णन उनके साहित्य मे मिलता है। उनमें जोला और गाल्सवर्दी जैसी तटस्थता है। उनका अनुवीक्षण तीव्र और पारदर्शी है—बाहर की तहो को बीधता हुआ, वह उस मर्म पर आघात करता है, जहाँ विनाश और पतन के कीटाणु समाज की जड़ काटने पर तुले हुए है। मैणवाल का यथार्थवाद उनकी बौद्धिक प्रकृति पर आश्रित है।

## मौलिक एकांकीकार

अपने पौराणिक एकाकियो मे भी मैणवालजी ने मौलिकता का समावेश किया है। "कृष्ण-वियोगिनी" की नायिका, राधा वियोग की अग्नि मे जलने वाली निश्चेष्ट स्त्री न होकर लोकसेवा मे तत्पर उत्साही कर्ममार्गिनी है। उसका एक वक्तव्य देखिये :—

राधा—"अरी गोपियो, यहाँ बैठी-बैठी क्यो ऊँघ रही हो? देखती नही ····ब्रज का सारा गोधन जगल

मे विखर चुका है—पशुओ की रक्षा करना है। ललिता, तुम तीनों गोधन को नगर की ओर सुरक्षित स्थान पर ले चलो और मैं विखरे हुए पशुओ को जंगल से ढूंढ़ कर लाती हूँ। जब व्रजबालाएँ मेरे साथ सब कुछ भूल कर लोकसेवा मे जुट जाँयगी, तब व्रज के उत्साह-हीन ग्वालबाल और किसानो के कृष्ण-वियोग से बुझे हुए हृदयो मे स्फूर्ति आ जायगी—वे अपने हल और बैलो को सम्हाल लेंगे—व्रज पुन हरा-भरा होकर लहलहाने लगेगा....व्रज की सुरक्षा के लिए मेरे समान समस्त व्रजवासियो को कृष्ण बनना ही होगा।"

प्राचीन कथानको की यह नवीन व्याख्या अभूतपूर्व है। हिन्दी मे ये व्याख्याएँ ऐतिहासिक दृष्टिकोण से होती रही। मैणवालजी ने युग की बढती हुई बौद्धिकता का परिचय दिया है।

## नाटकीय स्थिति की पकड़

टेकनिक की दृष्टि से मैणवालजी की विशेषता नाटकीय स्थिति (Dramatic Situation) की पकड़ है। पौराणिक, ऐतिहासिक तथा सामाजिक समस्याओ का चित्रण करते हुए आप ऐसी स्थिति का चुनाव करते है, जिसमे दर्शक और पाठक की समस्त मनोवृत्तियाँ केन्द्रित हो जाती है। कथानक के प्रदर्शन मे कौतूहल को विशेष स्थान दिया जाता है।

## कथोपकथन

कथोपकथन दो प्रकार के है। पौराणिक-सास्कृतिक नाटको के कथोपकथन गभीर, साहित्यिक और भावुकता से स्निग्ध है। इनमे कल्पना की रगीनी और विषय गौरव है; बुद्धि-व्यापार से अधिक विमुग्धता है। विषाद, अवसाद और क्रोध के स्थल भी बडे तीखे और मर्मस्पर्शी है; जैसे—

राक्षस—

राक्षस—"इसका परिणाम उसको भोगना ही पडेगा। समस्त पचनद पदाक्रान्त होगा। यवन विजय-पताका भारत के वक्षस्थल पर मँडरायगी। यवन-कोष भारतीय श्री से सुशोभित होगा। रक्तपात और अन्याय होगे। सीमान्त आर्यावर्त के पश्चिमी मडल सदैव के लिए अशक्त और निर्बल हो जाँयगे।"

—प्रतिज्ञा

कही-कही अप्रस्तुत योजना का आधार प्रकृति के मनोमुग्धकारी स्वरूप को बनाया गया है। मूल विषय के वेग को प्रकट करने के लिए अप्रस्तुत प्राकृतिक व्यापारों का भी सम्मिश्रित वर्णन है, जैसे—

आचार्य—"राजन्, विलम्ब के लिए समय नही है। बलिदान हो, जिसके फलस्वरूप यज्ञकुंड मे से छोटे-छोटे

स्फुलिंग उड-उड कर संध्या की लालिमा में आर्य-गौरव की लालिमा को मिला कर उसकी सौन्दर्य-श्री को द्विगणित कर दे। भगवान् भास्कर में इसी वीर की प्रतिभा प्रवेश कर उसकी रश्मिमाला को अधिक स्वर्णिम बना देगी, वह अखिल जगत् की कान्ति होगी।"

एक वक्तव्य में गद्यकाव्य का माधुर्य देखिये—

"यौवन वसन्त की फुलवारी है—एक लहर है, जो निरन्तर नहीं बहती। पुष्पो के लिए बार-बार वसन्त आता है, समुद्र मे लहरे उठती ही रहती है, किन्तु जीवन-सागर मे यौवन की हिलोर केवल एक बार आती है। इसके पश्चात् वृद्धा अवस्था का पदार्पण होता है। पतझड़ की तरह आशाओ का सुरम्य उद्यान शुष्क हो जाता है, उत्साह की तरंग सदैव के लिए मिट जाती है, सौन्दर्य एव युवावस्था के सुनहरी स्वप्न केवल स्वप्नमात्र रह जाते है, सब अपने पराये हो जाते है, शिथिलता एव निराशा का एक साथ आक्रमण होता है, फूल की विपिन्नावस्था को देखकर भ्रमर-वृन्द व्यग्य और घृणा करते है और केवल शेष रह जाती है, पल्लवविहीन वृक्ष के सदृश्य यह ककाल-सी देह। बोलो, नियति ने तुम्हे यौवन का उपहार दिया है, उसका तिरस्कार करोगी?"

—शत्रु से प्रेम

## रस, भाषा और चरित्र

सामाजिक समस्याप्रधान नाटको की भाषा सरल, नित्य के व्यवहार मे आने वाली, आडम्बरविहीन सीधी-सादी है। कथोपकथन सक्षिप्त, मर्मस्पर्शी, वाक्वैदग्ध्ययुक्त और पात्रो की चारित्रिकता प्रकट करने वाले है। अकबर के द्वारा भी ऐसी भाषा का व्यवहार कराया गया है, जो हिन्दुओ के सम्पर्क मे आकर वह बोल सकता था। यदि अकबर मस्तक पर हिन्दुओ का तिलक लगा सकता है और सूर्य का पूजन कर सकता है, तो वह हिन्दी भी अच्छी बोल सकता है।

"प्रसाद" से प्रभावित पौराणिक-सांस्कृतिक एकांकियो मे गानो का भी प्रयोग है। ये गाने सक्षिप्त है। एकांकियो के छोटे कलेवर के अनुसार इन्हे छोटा रक्खा गया है। इनसे एकाकी के वातावरण मे रस सृष्टि की गई है।

मैणवालजी यथार्थवादी एकाकीकार है, जिनका यथार्थ-वाद मनुष्य की सहज बौद्धिक प्रकृति पर आश्रित है। रोमांस और झूठी भावुकता के लिए यहाँ कोई स्थान नही। पश्चिम के एकांकियों से जो बौद्धिक उत्तेजना हिन्दी में आई है, उसका प्रभाव इनके सामाजिक एकाकियों पर अस्वीकार नही किया जा सकता।

शॉ का प्रभाव इन नाटको पर कई रूपो मे पडा है। प्रथम ये नाटक घटना-बहुल या पात्र-बहुल न होकर विचार

और समस्या नाट्य है। ये बौद्धिक चिंतन के मथन है। द्वितीय, उनकी शैली (पौराणिक नाटकों को छोड़ कर) यथार्थवाद की है। शॉ की भाँति कहीं-कहीं व्यंग्य और विदग्धता भी है। सामाजिक नाटक आधुनिक समस्याओं के प्रतिबिम्ब है। उनकी स्वाभाविकता और यथार्थवाद हमारे हृदय को स्पर्श करते है।

आपके एकांकी अनेक दृश्यों से बोझिल न होकर एक बड़े दृश्य में ही सब कुछ प्रस्तुत कर देते है। इनमे तीव्र सम्वेदना द्वारा प्रभाव में पूर्ण ऋजुता की सृष्टि की गई है। कई दृश्य वाले तथा अधिक पात्रों वाले लम्बे एकांकियों से प्रारम्भ कर मैणवालजी ने अपनी एकाकी-कला का विकास कर एक दृश्य वाले छोटे-छोटे मौलिक एकाकियों की सृष्टि की है। छोटे, मनोवैज्ञानिक और चरित्र-चित्रण-प्रधान नाटको की सृष्टि इनकी विशेषता है।

# नेताजी और
# आज़ाद हिन्द फ़ौज

# पात्र-परिचय

| | |
|---|---|
| १. नेताजी सुभाषचन्द्र बोस | (भारत के एक प्रसिद्ध नेता जिन्होने आजाद हिन्द फौज का सगठन कर अँग्रेजो से युद्ध किया)। |
| २. बंगाली कप्तान | (आजाद हिन्द फौज का एक सेनानायक) |
| ३. पंजाबी कप्तान | ( ,, ,, ) |
| ४. मेजर | (एक अग्रेजी सेनापति) |
| ५. केप्टेन | (सरकारी फौज का एक हिन्दुस्थानी सेनानायक) |

# नेताजी और आज़ाद हिन्द फ़ौज

## प्रथम दृश्य

[ आसाम की घनी पहाड़ियों की डरावनी घाटियों में आधुनिक ढंग का एक सैनिक शिविर खड़ा है। शिविर में एक अधेड़ अँग्रेज मेजर अपनी टेबिल पर रक्खे हुए युद्ध के नकशों को झुक कर ध्यान से देख रहा है । सहसा एक गोरे अँग्रेज सैनिक के प्रवेश ने मेजर का ध्यान भंग किया। गोरा सैनिक हाँप रहा है। उसने मेजर को सैनिक ढंग से सलाम की ]।

**गोरा सैनिक**—(घबराहट से) क्या मैं भीतर आ सकता हूँ ?

**मेजर**—कौन ? (नकशे को बन्द करते हुए) तुम आ गए ! मैं तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहा था। अरे ! तुम इतने घबरा क्यों रहे हो ? क्या किसी जापानी से मुठभेड हो गई ?

**गोरा सैनिक**—महाशय ! इस बार किसी जापानी से नहीं, एक महान् हिन्दुस्थानी से मुठभेड़ होने जा रही है।

मेजर—एक हिन्दुस्थानी से ! यह तुम क्या कह रहे हो ?

गोरा सैनिक—मैं जो कुछ अर्ज कर रहा हूँ, वह ठीक है। हम एक ऐसे देशभक्त से लोहा लेने जा रहे है, जो सहस्रों जर्मनी और जापानियों से भी अधिक भयंकर है।

मेजर—ठीक है, मैं समझ गया। परन्तु, इस बात का पता हिन्दुस्थानी सैनिकों को नहीं लगना चाहिए। वास्तव में वृटिश-साम्राज्य पर एक महान् संकट आ गया है। जाति और साम्राज्य की सेवा करने का यही अवसर है। शाबाश ! तुमने मुझे समय रहते सचेत कर दिया। जाओ, केप्टेन को शीघ्र मेरे पास भेजो। [गोरा सैनिक सैनिक ढंग से सलाम करके जाता है और सिगार का कस लगाता हुआ मेजर शिविर में इधर-उधर विचार-मग्न होकर टहलने लगता है। थोड़ी देर बाद एक भारतीय युवक तन कर मेजर के सामने आ खड़ा होता है]

मेजर—देखो केप्टेन ! यह मौका हाथ से न जाने पावे। इस बार तुमको जापान के एक बहुत खतरनाक अफसर का सामना करना पड़ेगा। जापान के इने-गिने अफसरो में इसकी गिनती है और खास तौर से इस मोर्चे पर लड़ने के लिए यह आया है।

[अँग्रेज मेजर सिगार के बहाने रुक कर हिन्दुस्थानी केप्टेन के चेहरे की ओर देखने लगता है। केप्टन के मुख

पर सहसा लाली दौड़ती हुई दिखाई पडती है और चेहरा तमतमा उठता है ]

केप्टेन—अफसर! एक खतरनाक जापानी अफसर!!

मेजर—हाँ, इस बार जापानी हिन्दुस्तान को गुलाम बनाने का भरसक प्रयत्न कर रहे है। यूं तो मै तुम लोगो से लड़ने को न कहता, क्योकि जापानियो का साथ कुछ हिन्दुस्तानी सैनिक भी दे रहे है। परन्तु, तुम सोचो कि वह एक जापानी अफसर के मातहत लड़ रहे है। जापानियो ने कुछ चाँदी के टुकड़े देकर उनको अपनी ओर मिला लिया है। हम तो केवल यह चाहते है कि उस खतरनाक जापानी अफसर को तुम जिन्दा या मुर्दा पकड़ लाओ। बस, हम लोगो का काम समाप्त हो जायगा।

**[ केप्टेन झुक कर अपने सीने पर लगे हुए स्टार को देखता है और कन्धे पर के यूनियन जैक के बैज को हाथ से सम्भालने लगता है और सहसा एक कोई गम्भीर दृढ़ निश्चय भाल पर दिखाई पड़ता है और दूसरे ही क्षण वह छाया की तरह विलीन हो जाता है ]।**

मेजर—(दूसरी सिगार सुलगाते हुए) तुम्हारी कौम कितनी बहादुर और कितनी स्वाभिमानिनी है, केप्टेन ? वैसे मै इस मोर्चे पर तुमसे लडने को न कहता, परन्तु समय बहुत कम है और थोड़ी भी देर की तो, वह जापानी अफसर और उसके साथी हिन्दुस्तान की सीमा मे घुस जाँयगे। क्या

तुम यह सहन करोगे कि तुम्हारे जीवित रहते कोई भी जापानी तुम्हारी मातृभूमि पर अपने नापाक क़दम रक्खे ?

कैप्टेन—(जोश से दृढ़ स्वर में) नहीं, कभी नहीं !! हमारे जीवित रहते ऐसा कदापि नहीं होगा। कल प्रात.काल हमारा आक्रमण होगा।

मेजर—ईश्वर तुम्हे शक्ति दे ! धन्यवाद। [कैप्टेन सैनिक अभिवादन करता हुआ शिविर से प्रस्थान करता है ]।

## द्वितीय-दृश्य

[ स्थान—युद्धस्थल। समय—प्रात काल । अँग्रज़ों के मातहत लड़नेवाले हिन्दुस्थान के सैनिकों ने आज़ाद हिन्द फ़ौज को चारो ओर से घेर लिया है। घोर संग्राम हो रहा है और आज़ाद हिन्द फ़ौज के सैनिक प्राणों का मोह त्याग कर अपने आपको स्वतन्त्रता की वलिवेदी पर होम रहे है। बीच के एक बड़े से तम्बू के सामने नेताजी सुभाषचन्द्र बोस व्यस्त और व्यग्र मुद्रा में खड़े हैं। उनके सम्मुख दो कप्तान उपस्थित हैं। उनमें से एक दुबला-पतला लम्बा-सा बंगाली है, जिसके चेहरे से एक गहरी वेदना और भावुकता टपक रही है, दूसरा हैं स्वस्थ पंजाबी, जिसके चेहरे पर स्वाभिमान स्पष्ट झलक रहा है ]

**बंगाली कप्तान**—(टूटे हुए घेरे और क्षण-क्षण पर समीप आते हुए शत्रुओं को देख कर) मैंने पहले ही कहा था नेताजी, आप स्वयं मोर्चे पर रह कर खतरा न उठाइए, अब क्या होगा ? वायुयान केवल एक है, पेट्रोल भी समाप्त है। ओह ! नेताजी, अब भी मान जाइए, आप पर कोई भी खतरा आ गया तो क्या होगा ?

[नेताजी क्षण भर बंगाली कप्तान के भावुक चेहरे की ओर ध्यान से देखते हैं और मुस्कराने लगते हैं]

**बंगाली कप्तान**—नहीं, मुस्कराने की बात नहीं है। आपको अपनी जान से खेल करने का कोई अधिकार नहीं है—आपके प्राण अब स्वतन्त्रता की स्वाँस बन गए है। आपके अमूल्य जीवन के साथ ही देश के भाग्य का भी सदैव के लिए निर्णय होने जा रहा है। (नेताजी कुछ कहना ही चाहते हैं कि मुसलमान कप्तान बोल उठता है)

**पंजाबी कप्तान**—और देखो, इस कम्बख्त कौम की नमक हलाली ! मौत की हद पारकर नेताजी यहाँ जान लड़ाकर उनकी आजादी के लिए लड़ रहे हैं और ये बदनसीब हिन्दुस्तानी खुद हमारे खून के प्यासे बन रहे हैं। भाई-भाई का खून बहा रहा है। खुद हिन्दुस्तानी ही हिन्दुस्तान को गुलामी की जंजीरों से जकड़ने पर तुले हुए हैं। आजाद हिन्द फौज को आज हिन्दुस्तानी ही मिटाने को तय्यार है। वाह रे हिन्दुस्तान !

[ लड़ाई का शोर बढ़ता है और दूर पर फटते हुए ग्रेनेडो के टुकडे कभी-कभी दो एक गज़ की दूरी पर गिरते है। बंगाली कप्तान चारो ओर देखता है और चिन्तातुर नेत्रो से सुभाष की ओर देखने लगता है। नेताजी स्वयं उन चिन्तातुर नेत्रों के स्नेह के अनुमान से काँप उठते हैं। पंजाबी कप्तान आगे बढता है और ग्रेनेड का एक टुकड़ा उठा कर वापस आता है। ]

**पंजाबी कप्तान**—और· ·और नेताजी, आप यकीन कर सकते है, यह हिन्दुस्तानियों के हाथो का फेंका हुआ है। कम्बख्त, नामर्द।

**नेताजी**—ठहरो! अपनी कौम के विरुद्ध मै इतने कठोर शब्द नही सुन सकता। मै घृणा भी करता हूँ, किन्तु प्रेम के लिए, समझे। उनके सीने मे भी हिन्दुस्तानी दिल धडकता है। यही कारण है कि वे हम लोगो के रक्त के प्यासे बन गए है।

**पंजाबी कप्तान**—आपका यह प्रेम मेरी समझ मे नही आ रहा है?

**बंगाली कप्तान**—खैर, लेकिन, यह बताइए, आप निकलेगे किस तरह? इस घेरे से बाहर लाखो हिन्दुस्तानी आपकी अपलक प्रतीक्षा कर रहे होंगे। सरकारी सेना समीप आ रही है और यदि आप पकड़ लिए गए, तो सारा

विद्रोह मर जायगा और हिन्दुस्थान की स्वतन्त्रता एक लम्बी अवधि तक खतरे मे पड जायगी।

[ नेताजी क्षण भर सोचते है और दूसरे ही क्षण उनके मुख पर विजली-सी चमक उठती है ]

**नेताजी**—ड्राइवर ! मोटर तय्यार करो। मै सरकारी फौजो को चीरता हुआ बाहर जाऊँगा।

**बंगाली कप्तान**—अरे !

(सब के मुंह से एक चीख निकल पड़ती है और सब स्तम्भित हो जाते हैं)

**पंजाबी कप्तान**—उन कतारो को चीर कर, जहाँ जहरीली गोलियाँ तैर रही है, कदम-कदम पर ग्रेनेड विछे है और उनको चीर कर नेताजी जायँगे !

**सब मिलकर**—(एक स्वर में) नही, हम यह खतरा नहीं उठाने देगे।

**नेताजी**—(हँस कर और फिर सहसा गंभीर होकर) खतरा ! खतरो का तो मै आदी हो गया हूँ।

**एक आवाज**—आप शत्रुओं के बीच मे अकेले नहीं जा सकते। हम नही जाने देंगे।

**नेताजी**—शत्रु ! वे सब भारतीय है। हमारे भाई है। उन्हे शायद यह मालूम नही है कि मै यहाँ हूँ और आप सब मेरे साथ उनकी स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहे है। विश्वास रखिए, मै पहली दृष्टि मे ही उनके हृदयो पर अधि-

कार कर दूँगा। भारतीय रक्त अभी इतना पतला नहीं है कि सच्चे बलिदान का मूल्य भी न आंक सके।

(नेताजी उछल कर लारी पर बैठते हैं और उनके साथ ही बंगाली कप्तान चढ़ता है और पंजाबी कप्तान चढ़नेका प्रयत्न करता है)।

नेताजी—मैं समझता हूँ कि तुम्हारा फौज के साथ ही रहना ठीक है।

पंजाबी कप्तान—क्या आप चाहते हैं कि मैं आपका साथ छोड़ कर अपने खुदा को धोखा दूँ, अपने ईमान से गिर जाऊँ।

नेताजी चुप हो जाते हैं और पंजाबी कप्तान मोटर पर सवार हो जाता है, परन्तु ड्राइवर हिचकिचाता है।

ड्राइवर—नेताजी! मुझे अपने प्राणों की कोई चिन्ता नहीं, परन्तु आपका जीवन बहुत कीमती है, यदि कोई भी गोली. ।

नेताजी—गोली! (हँसकर) अभी अँग्रेजों ने वह गोली नहीं बनाई, जो मेरे सीने को पार कर सके। समझे! चलो, छोड़ दो फुल स्पीड पर। चाहे मोटर चूर-चूर हो जाय, पर तुम ब्रेक मत लगाना, चलो।

दृश्य-परिवर्तन

# तृतीय-दृश्य

(अग्निबाण की तरह मोटर पलभर में शत्रुओं की क़तारों में पहुँचती है। विरोधी सैनिक उसे घेरने दौड़ते हैं, लारी उछल कर पांच लाशों को कुचलती हुई आगे बढ़ती है) ।

सरकारी कप्तान—देखते क्या हो, टायरों मे गोली मार दो।

(दूसरे ही क्षण पिछले टायर को दो-तीन सनसनाती हुई गोलियाँ चीरती हुई निकलती है। लारी में एक भारी हचका लगता है और वह खड़-खड़ाती हुई आगे बढ़ती है। दूसरे ही क्षण लारी के शीशे पर गोलियाँ तड़कती है—एक गोली आगे के शीशेमें लगती है, जिसके परिणाम-स्वरूप शीशे का एक नुकीला टुकड़ा ड्राइवर के चश्मे को तोड़ता हुआ उसकी आँख में घुस जाता है। वह बेसुध होकर एक ओर लुढ़कता है। नेताजी उछल कर चक्का अपने हाथ में लेते है, परन्तु एकाएक दूसरी गोली शीशे के दूसरे टुकड़े को तोड़ती है। अर्द्धमूर्छित ड्राइवर चौंक कर उस शीशे के वार को अपने हाथों पर लेता है और उसकी हथेलियाँ लोहूलुहान हो जाती है। नेताजी रोमांचित हो जाते है] ।

नेताजी—(भरे हुए कंठ से) मेरे बहादुर बच्चे !

[ बंगाली कप्तान उत्तेजित होकर खड़ा होता है। उसके खड़े होते ही एक गोली उड़ती हुई उसकी पसलियों को तोड़ कर निकलती है। उछलता है और एक चीख सुनाई पड़ती है। लारी की भयंकर तूफानी गति के कारण उसकी लाश डगमगाती हुई चक्कर खाकर नीचे गिर पड़ती है ]

पंजाबी कप्तान—(लाल नेत्र करके) वह हिन्दुस्तानियों की गोली से मरा है। अब मैं नहीं रुकूँगा। अच्छा, अलविदा, नेताजी ! खुदा हाफिज। (एक क्षण में लारी से नीचे कूदता है, चक्कर खा कर गिरता है और दौड़ कर साथी की लाश पर जा खड़ा होता है। रिवाल्वर फेंक कर ऊँचे हाथ करता है)।

सरकारी कप्तान—पकड़ लो, इस जापानी चूहे को।

पंजाबी कप्तान—वह कौन हिन्दुस्तानी है, जिसने एक हिन्दुस्तानी के सीने पर गोली चलाई है? (सब स्तम्भित-से हो जाते हैं)

एक सैनिक—(आगे बढ़ कर) ठहरो, यह जापानी अफसर नहीं है, यह तो एक हिन्दुस्तानी है।

सरकारी कप्तान—घेर लो इसे। (सैकड़ों सैनिक पंजाबी कप्तान को घेर लेते हैं और रिवाल्वर तान कर खड़े हो जाते हैं) कहाँ है वह जापानी ?

पंजाबी कप्तान—कौन जापानी ? (सक्रोध) तुम

जानते हो आज तुमने नेताजी पर गोलियाँ चलाई है। क्या तुम इतने कमीने हो गए हो कि चाँदी के टुकडो के लिए नेताजी की लाश अँग्रेजो को सौपने के लिए तैयार हो ? क्या तुम इतने गद्दार हो गए कि देश की आजादी को कौड़ियो मे बेचना चाहते हो ?

[ चारों ओर तने हुए रिवाल्वर झुक जाते है, दृष्टियाँ नीची गड़ जाती है और चेहरो पर शर्म छा जाती है। पठान कप्तान क्रोध से काँपता है। वह झुक कर बंगाली की लाश की पसली से बहता हुआ खून अपने हाथ में उठाता है)।

सरकारी कप्तान—तुम क्या चाहते हो ?

पजाबी कप्तान—यह पसली, यह पसली तुम्हारी गोलियो से टूटी है, यह खून तुम्हारा बहाया हुआ है। लो, अगर चाँदी के टुकडों को गद्दारी से पाने के बाद भी तुम्हारी प्यास नही बुझी, तो खुशी से अपने देश-भाइयो के खून से तुम अपनी प्यास बुझाओ। लो, खामोश क्यों खडे हो ? मारो, अपने वतन के लिए मर मिटने वाले शहीदो को। तानो रिवाल्वर।

[ आवेश में आकर बंगाली के खून के छींटे उन पर उछालता है। खून के छींटे लगते ही उनके मुर्दा दिलों में जोश उमड़ पड़ता है ]।

सरकारी कप्तान—हमे धोखा हुआ। हम से नेताजी

# कौंसिलर

# पात्र-परिचय

## पुरुष-पात्र

१— पं० विश्वेश्वरप्रसाद (म्युनिसिपल कौंसिलर)

२—इन्सपेक्टर (एक राज-कर्मचारी)

३—मुन्शी (एक राज-कर्मचारी)

## स्त्री-पात्र

१—कुन्ती (एक शिशु)

२—श्यामा (पं० विश्वेश्वरप्रसाद की धर्मपत्नी)

# कौंसिलर

[ अपने निवास-स्थान के एक छोटे से दफ़्तर में एक नवयुवक म्युनिसिपल कौंसिलर, प० विश्वेश्वर प्रसाद एक साधारण-सी कुर्सी पर बैठे हैं। उनकी टूटी-सी टेबिल के सामने तीन-चार पुराने स्टूल हैं, जिन पर दो राजकर्मचारी बैठे हैं और दो जमादार दर्वाजे पर सतरी-से खड़े हैं। पंडितजी की टेबिल पर कुछ कागज़ात और नकशे खुले पड़े हैं। राजकर्मचारी नकशों की सहायता से पण्डितजी को कुछ समझा रहे हैं ]।

मुंशी—इन्सपेक्टर साहब ! (कौंसिलर की ओर संकेत करता हुआ) आपको, धन्ना हरिजन के मकान की मरम्मत के कागज तो दिखा दो।

इन्सपेक्टर—अरे हाँ, यह बात तो मैं भूल ही गया था।

विश्वेश्वर प्रसाद—बात क्या है?

इन्सपेक्टर—अरे साहब, क्या अर्ज़ करूँ? एक मामूली-सी बात का बतगड़ बना लिया है। यदि सच पूछो तो, आज़ादी इन हरिजनों को मिली है।

विश्वेश्वर प्रसाद—हरिजनों की आज़ादी आपको इतनी क्यों अखर रही है?

**इन्सपेक्टर**—क्या बताऊँ सरकार, इन्होंने तो नाक में दम कर रक्खा है। **(कागज और नकशा हाथ में लेता हुआ)** इसी मुआमले को लीजिए। बन्ना भगी के मकान का एक हिस्सा अर्से दराज से टूटा हुआ है। मलवे का ढेर लग रहा है। गधे के बच्चे को अब मरम्मत कराने की सूझी है। आम रास्ते को रोकना चाहता है। विष्णुदत्तजी पारीक, लाला सुखीराम और कपूरचन्द्र जैन ने तो साफ-साफ लिख दिया है कि फौरन् मलवा साफ करके आम रास्ते को चौडा बना दो। अब, केवल आप ही की सही होनी बाकी है।

**विश्वेश्वर प्रसाद**—शाबाश ! इन्सपेक्टरजी, आप चालाक तो बहुत मालूम पडते है। पर, यह उल्लू की लकड़ी किसी दूसरे पर ही घुमाने का कष्ट करो।

**इन्सपेक्टर**—हुजूर, हुजूर, आपने यह क्या फर्माया ? **(कुछ घबरा कर)**

**विश्वेश्वर प्रसाद**—मै सच कहता हूँ। इन्सपेक्टरजी, आपकी दाल यहाँ नही गल सकती। समझे, बन्ना ने आपको पैसे नही दिये, इसलिए उसका कच्चा मकान भी तुड़वाने पर उतारु हो गए हो। मैंने स्वय मौका देखा है, तुम झूठे हो।

**इन्सपेक्टर**—सरकार ! मै झूठा ही सही, पर और मेम्बरान की भी... तो....।

**विश्वेश्वर**—चुप रहो इन्सपेक्टरजी ! उनकी कलम

उनके हाथ मे थी और मेरी कलम मेरे हाथ मे है। (पं० **विश्वेश्वर इन्सपेक्टर के हाथ में से कागज छीन कर कुछ लिखते है)** जाओ, फिर कभी मुझ से ऐसा अन्याय करवाने का साहस मत करना।

इन्सपेक्टर—(खिन्न होकर) अरे, तुम दोनो यहाँ खडे क्या करते हो? काम पर क्यों नही लगते? मुशीजी, भगतीराम के चौक मे इन्हे काम बताओ? और, मै सरकार से बात करके अभी आया।

**(तीनों व्यक्ति कौंसिलर को सलाम करके प्रस्थान करते हैं)**

इन्सपेक्टर—भय्याजी, तुम मेरे दोस्त के लडके हो, इसलिए मै आपको अपने अनुभव की कुछ बाते बताना चाहता हूँ। यह एक मानी हुई बात है कि सात चोरो मे एक साहूकार नही रह सकता। लाला सुखीराम और कपूरचन्द्रजी को मेम्बर बने अभी चार महीने भी नही हुए, पर एक के घर पर घोडे हिनहिनाते है और दूसरे के दर्वाजे पर मोटरे दौडती है। इधर आपका यह हाल है—वही पुरानी टेबिल और वही टूटी हुई कुर्सियाँ। जिधर देखो उधर आपके शत्रुओ की संख्या बढती ही जा रही है।

विश्वेश्वर—मोहम्मदअली जी! क्या आप चाहते है कि मैं अपना ईमान कुछ चाँदी के टुकडो में बेच दूँ, जिनकी सेवा करने के लिए खडा हुआ हूँ, उन पर ही जुर्म करूँ और

अपने स्वार्थ के लिए अपनी आत्मा को धोखा देने लगूँ। सच्चाई और ईमान पर चलने वालों की दशा तो सदा खराब ही रहती है, पर उनका सर सदा ऊँचा रहता है। यदि परिस्थितियों को अपने अनुकूल न बना सका, तो मैं इस क्षेत्र में ही दूर हट जाऊँगा। पर, मुझे पूरा भरोसा है कि अन्तिम विजय सत्य की ही होगी। (बाहर से कोई पुकारता है) कौन है ? अन्दर आओ भाई!

(एक काले से गन्दे कपड़े पहने हुए मोटा सेठ प्रवेश करता है और इन्सपेक्टर के पास बैठ जाता है)।

विश्वेश्वर—कहिए, सेठजी क्या आज्ञा है ?

सेठ—(इन्सपेक्टर की ओर घूर कर) क्या कहूँ, आजकल दूकानदारी करना भी पाप है। पर, जब आप जैसे बड़े आदमियों का हिसाब भी दो-दो तीन-तीन महीनों तक न हो, तब कैसे काम चले ?

विश्वेश्वर—अच्छा सेठजी ! आप कल पधारना।

सेठ—अरे साहब ! आज भी आपने तो टाल दिया। पहले सौदा देते हैं, पीछे पैसे मांगते हैं खैरात नहीं लेते।

(बड़बड़ाता हुआ सेठ प्रस्थान करता है)

इन्सपेक्टर—(एक कागज़ और नक्शा खोलते हुए) सेठ दूलीचन्द अपने मकान के आगे बरंडा और दूकान बनवाना चाहता है। सड़क काफी चौड़ी है। कोई खराबी नहीं, इसलिए इजाजत दिला दी जाने में कोई हर्ज नहीं है।

**विश्वेश्वर**—(नकशे को ध्यान-पूर्वक देखते हुए) स्थान तो वास्तव मे इजाजत देने के योग्य है। (**कागजों पर कुछ लिखते हैं**)

**इन्सपेक्टर**—भय्याजी मुआफ कर दे तो एक अर्ज़ करूँ।

**विश्वेश्वर**—कहिए न।

**इन्सपेक्टर**—सेठ दूलीचन्द ने मुझे ३०) के तीन नोट बाल-बच्चो को मिठाई बाँटने को दिये थे। लाला सुखीराम और कपूरचन्द्र के बच्चो को तो मै मिठाई दे आया, अब आपकी क्या मर्ज़ी है?

**विश्वेश्वर**—इससे पहले दूलीचन्द ने मेरे बच्चो के लिए कभी मिठाई नही भेजी। मै क्षमा चाहता हूँ। मेरे बच्चो के भाग्य मे रिश्वत की मिठाइयाँ कहाँ रक्खी है? उन्हे तो सूखी रोटी का टुकडा ही खाकर जीने दो। सेठो की मिठाइयाँ मेरे बच्चो को कैसे पच सकती है? हराम की मिठाइयाँ खाने से बच्चो के सस्कार बिगड जाते है।

**इन्सपेक्टर**—(**कुर्सी से उठकर सलाम करता हुआ**) पण्डितजी, आप इन्सान नही देवता है, देवता। (**इन्सपेक्टर सलाम करके कमरे से बाहर जाता है और एक छोटे शिशु का प्रवेश होता है।**)

**कुन्ती**—चाचाजी! चाचाजी!!

**विश्वेश्वर**—क्यो बेटी?

**कुन्ती**—आम वाला आया है। उसके ठेले मे बहुत

मीठे-मीठे आम है। सुन्दर और मोहिनी भी ले रहे है।

विश्वेश्वर—जा बेटा, अपनी माँ से पैसे लेकर तू भी ले आ। [पं० विश्वेश्वर उदास होकर अपने स्थान पर बैठे रहते है और कुछ ही क्षणो में कुन्नी दोनो हाथो में आम पकड़े हुए अपनी माँ के साथ पंडितजी के कमरे में प्रवेश करती है ]।

श्यामा—(रुष्ट होकर) क्यो जी, इन बच्चों को आप मेरे पीछे क्यो लगा देते हो? आपने मुझे कौनसी धरोहर सम्भला रक्खी है, जिससे मैं आपका और इन बालको का दिल खुश करती रहूँ? दिन भर तो आप मोहल्ले की सफाई कराते है और रात भर कागज काले करते है, फिर घर मे पैसा कहाँ से आयेगा? यदि कोई भूला-भटका पैसा देना चाहे, तो उसे फटकार दिया जाता है। आखिर, इस थोथी पंडिताई की अकड़ मे रक्खा ही क्या है?

विश्वेश्वर—श्यामा, मैं अपना कर्तव्य-पालन कर रहा हूँ और भगवान् मेरी परीक्षा ले रहे है। सच तो यह है कि सच्चे लोक-सेवको, निस्वार्थी कार्य-कर्ताओ और होन-हार लेखको के मूल्य को अभी हमारे राष्ट्र ने नही पहिचाना है। पर, तुम सच कहती हो, हमे गृहस्थी भी तो चलाना है। (अपनी टेबिल के दराज से एक हस्तलिखित प्रति निकाल कर श्यामा को दिखाते है) श्यामा, क्या तुझे याद है, इस पुस्तक को मैंने कितने परिश्रम से लिखा था?

जेष्ठ का महीना, कडकड़ाती धूप और कमरे की अगारे-सी चार दिवारियो मे बैठा हुआ, पसीनो मे तर, एक युवक सब कुछ भूल कर पुस्तक लिख रहा है। उसकी धर्मपत्नी यदि पखा झलती है तो वह मना करता है, पानी का गिलास पीने को देती है तो वह दूर रख देता है। वह किसी दूसरे ही लोक मे तन्मय हो रहा है। श्यामा, यही पुस्तक है। इस पुस्तक से हजारो मनुष्यो को लाभ होगा। कोई इससे मालामाल होगा और कोई विद्वान्। मुझ को इससे कुछ चाँदी के टुकडे ही मिलेगे, जिनसे कठिनता से एक महीने का काम चल सकेगा, यदि तुम कुछ दिन और गृहस्थी का काम चला सको तो, हम को  भी . । नही, नही, हम नहीं चला सकते। मै अभी जाता हूँ। **(हस्तलिखित प्रति को लेकर ंडितजी द्वार की ओर बढ़ते है)।**

**श्यामा**—सुनो भी, आप तो व्यर्थ जोग मे आ गए। ऐसी कोई बात नही है। क्या इस पुस्तक को भी कोडियों मे दे दोगे?

**विश्वेश्वर—(द्वार पर से घूम कर)** यह बात तुम प्रलोभनवश कह रही हो। पर, श्यामा! पुरुष का कदम बढने के बाद पीछे नही हटता।

**(पं० विश्वेश्वर शीघ्रता से बाहर जाते है)**

**पटाक्षेप**

# कृष्ण-वियोगिनी

# पात्र-परिचय

स्त्री-पात्र

१. नन्दिनी (राधा की एक सखी)

२. विशाखा ( ,, )

३. ललिता ( ,, )

४ राधा ( कृष्ण-वियोगिनी )

पुरुष-पात्र

१. उद्धव (श्रीकृष्ण के सखा)

# कृष्ण-वियोगिनी

[स्थान—यमुना-तट की एक सघन निकुंज। कुछ गोपियाँ कदम्ब की तीतरपंखी छाया मे बैठी हुई बातें कर रही है। काली, पीली, श्याम, धूम्र, श्वेत आदि रंगों की स्वस्थ एवं सुन्दर धेनुएँ तथा उनके बछड़े जंगल में आस-पास उन्मने-से होकर चर रहे है।]

**नन्दिनी**—न जाने, श्यामा और गोवर्द्धन को भी क्या हो गया है? मन-मार कर चरते है। कपिला और धूम्रावती के नेत्रो के कभी आँसू ही नही सूखते। सरयू और गगा तो सदा उदास ही रहती है। गणेश और नन्दी कालिन्दी की ओर कसक भरी चितवन से देखा ही करते है। कृष्ण-वियोग से व्रज का सारा गोधन ठगा-सा, लुटा-सा और विरही-सा बन गया है।

**विशाखा**—देखती नही, निकुंजो मे नव पल्लव विक-सित होते है, कोपले अपना घूँघट खोलती है, पुष्प-वाटिका के सुमन खिलते है, पर इनका वह आकर्षण, इनकी वह कोमलता और इनकी वह मादकतापूर्ण सुगन्ध न जाने आज कहाँ चली गई? मयूर नाचते है, भ्रमर गुंजते है, पिक गाती है, पर, इनके नृत्य के साथ अश्रुओ की वर्षा होती है,

इनके गुजार मे कर्कशता आ गई है और कोयल की कूहक हृदय-भेदी वन कर रुदन की-सी ध्वनि करती है।

ललिता—कृष्ण मथुरा क्या गये, सच पूछो तो व्रज-मण्डल के प्राण सूखते ही जा रहे है। न जाने वह अव क्यो और किसके लिए जीवित है ? (गहरी निश्वास के साथ) दीपक की पतली-सी लौ के समान टिमटिमाती हुई एक आशा थी, वह भी अव बुझना चाहती है। कोई कहते है कि भीषण वियोग के प्रभाव से राधा के मस्तिष्क मे विकार हो गया है, कोई उसे दीवानी वताते है, जिसने लोक-लाज खो कर व्रजमण्डल मे अपना घर वना लिया है। कोई कहते है कि उसने सेवा-मार्ग अपना लिया है। राधा कहती है कि 'वह कृष्ण है, उसे कृष्ण के नाम से ही पुकारा करो।' वृषभानुदुलारी अव इस ससार मे नही है, उसे भूल जाओ, सर्वत्र केवल कृष्ण ही कृष्ण है। राधा ने तो अपना अस्तित्व मिटा कर कृष्णमय वना लिया, पर, हाय ! हम क्या करे ? न अपने को मिटा सकी और न जीवित ही समझती, केवल सिसकना और तडफना रह गया है।

**(मोर-मुकुट धारण किये हुए और बाँसुरी वजाते हुए वादलों के समान उमड़ते हुए गोधन के पीछे-पीछे राधा आ रही है)—**

नन्दिनी—वह देखो, पगली आ गई। सारे गौ-धन को व्रज की ओर वढाये लिए जा रही है। अभी दो पहर दिन शेष है, इसे यह क्या सूझा है ?

**विशाखा**—सच पूछो तो राधा भीषण वियोगाग्नि से सतप्त होकर भी कर्तव्य-भ्रष्टा नही बनी है। वह मन-मोहन की दिन-चर्या को अपने जीवन मे पूर्ण रूप से उतारने मे दत्तचित्त है। खेद तो इस बात का है कि हम अकर्मण्य बन कर राधा की समस्याओ को और भी उलझा रही है। यदि राधा भी हमारी तरह हाथ पर हाथ धर कर निराश होकर बैठ जाती, तो ब्रज की आज क्या दशा होती?

**ललिता**—राधा के समान क्या हम सब कृष्ण को भूलने का प्रयास नहीं करतीं? पर, मन नही मानता कि राधा श्याम सुन्दर है। उसके कहने से मोरमुकुट धारण करती है, वशी शुष्क अधरो पर लगाती है, गोधन को हाँकने के लिए हाथ मे लठिया उठाती है, पर हृदय आगे नही बढता, हज़ार बार समझाने पर भी मन नही मानता। अरे, गणेश, नन्दी, कपिलादि कहाँ भगे जा रहे है?

(एक धीमी-सी सुमधुर अवाज़ आती है और उसके बाद तीनो सखियो के सम्मुख गोधन के साथ राधा प्रकट होती है)

**राधा**—अरी गोपियो, यहाँ बैठी-बैठी क्यो ऊँघ रही हो? देखती नही, उत्तर दिशा मे बिजली की चमक के साथ एक बदली उमड चली है—बडे वेग से वर्षा आने वाली है। ब्रज का सारा गोधन जगल मे बिखर चुका है—पशुओ की रक्षा करना है। ललिता, तुम तीनो गोधन

को नगर की ओर सुरक्षित स्थान पर ले चलो और मैं शेष बिखरे हुए पशुओं को जंगल में ढूँढ कर लाती हूँ।

विशाखा—किन्तु राधा.. ?

राधा—तुम्हारी राधा तो कभी की मर चुकी, तुम उसे भूलती क्यों नहीं ? जब ब्रजबालाएँ मेरे साथ सब कुछ भूल कर लोक-सेवा में जुट जाँएगी, तब ब्रज के उत्साहहीन ग्वालबाल और किसानों के कृष्ण-वियोग में बुझे हुए हृदयों में स्फूर्ति आ जायगी—वे अपने हल और बैलों को सम्भाल लेंगे—ब्रज पुनः हरा-भरा होकर लहलहाने लगेगा। ब्रजवासियों को यह नहीं भूलना चाहिए कि ब्रजमण्डल किसी की धरोहर है और हमारे जीवित रहते उसे क्षति कौन पहुँचा सकता है ? जिसकी यह धरोहर है, उसको सम्भला कर चाहे तुम (कंठ रुँध जाते हैं और अश्रु-राशियाँ बहने लगती है) चाहे तुम मानो या न मानो ब्रज की सुरक्षा के लिए मेरी तरह समस्त ब्रजवासियों को कृष्ण बनना ही होगा।

(वृक्षों की झुरमुट से—नैपथ्य में सहसा आवाज आती है—'धन्य ब्रजवासियो ! अब नहीं रुका जाता' सहसा एक कृष्ण-सदृश्य दिव्य व्यक्तित्व गोपियों के सम्मुख आता है और अश्रु धाराएँ बहाता हुआ राधा के चरणों में लौटने लगता है और फिर हाथ जोड़ कर पुनः सम्मुख खड़ा होता है ) ।

**राधा**—साधु, तुम कौन हो ? तुम्हारी वेश-भूषा और रंग-ढंग तो चिर-परिचित-सा है।

**उद्धव**—देवी ! मैं मथुरा से आया हूँ—मेरा नाम उद्धव है। महाराज श्री कृष्णचन्द्र का निजी सखा होने के नाते मैं आप लोगों की सेवा में भेजा गया हूँ। मुझे अपने पाण्डित्य पर बहुत घमण्ड था और मैं ज्ञानबल से आप लोगों पर विजय-प्राप्त करने की धृष्ट कल्पना करता था। आपके अभूतपूर्व कृष्णवियोग और लोक-सेवा के सुदृढ़ रचनात्मक कार्य को देख कर स्वयं को पूर्णतया आज पराजित समझता हूँ। मेरे ज्ञान और पाण्डित्य का दम्भ व्रज के रजकणों में घुलकर भक्तिमय हो गया है। व्रजबालाओ, आपको धन्य है ? आप तो कृष्ण से भी बढ़कर है।

**ललिता**—चतुर नागरिक, क्या आपके संग हमारे चित्तचोर नहीं आए ? वे कब आएँगे ? क्या उन्होंने व्रज-बालाओं के लिए और विशेषकर राधिका के लिए कोई सन्देश भेजा है ?

**नन्दिनी**—भाई उद्धव, यह तो बताओ, क्या हमारे मदन गोपाल मथुरा में भी गऊ चराते हैं, क्या कभी-कभी मक्खन-चोरी भी करते हैं ? सुना है कि गोपीनाथ आजकल मथुरा में कुब्जादासी के साथ रास-क्रीड़ा करते हैं ?

**विशाखा**—क्या वासुदेव और माता देवकी हमारे बाल-गोपाल को नन्द-यशोदा की तरह माखन और रोटी

का कलेवा अब भी देते है? माता यशोदा ने घनश्याम का कलेवा एकत्रित कर रक्खा है—वे कहती है कि मोहन आवेगा तो उसे उसका सारा कलेवा सौंप दूँगी। अरे, महात्मा उद्धव, रोते क्यों हो? तड़पते हुए ब्रज का केवल छाया चित्र देख कर ही काँप उठे! बताओ, कृष्ण ने क्या कहा है?

**उद्धव**—(उद्धव के हिचकियाँ बँध जाती है और एक पत्रिका वे कठिनता से राधा को सौंपते है और राधा उसे हृदय से लगा लेती है और उद्धव का कंठ रुँध कर भर्रा जाता है) कृष्ण नही आ . सकते।

**राधा** (प्रमादिनी-सी होकर) तुम कपटी हो। कौन कहता है कृष्ण यहाँ नही है? मै ही कृष्ण हूँ—मुझे सर्वत्र कृष्ण ही कृष्ण दिखाई पडते है। देखते नही, मेरा मोरमुकुट, यह बाँसुरी? यह बाँसुरी किसकी है? (**बाँसुरी बजाने की चेष्टा करती है और मूर्छित होकर गिर पड़ती है, उद्धव और सखियाँ राधा को सम्भालती है**)।

पटाक्षेप

# वालि-वध

# पात्र-परिचय

## पुरुष-पात्र

१. श्रीराम (अयोध्या के वनवासी राजकुमार)

२. श्री लक्ष्मण (श्री राम के छोटे भाई)

३ ब्रह्मचारी (श्री हनुमान)

४. सुग्रीव (किष्किन्धा के राजा के छोटे भाई)

५. वालि (किष्किन्धा के राजा)

# बालि-वध

## प्रथम दृश्य

[ स्थान—ऋष्यमूक पर्वत। पथरीली घाटियो में राम और लक्ष्मण भटक रहे हैं। सहसा उस भयावह एवं निर्जन वन में एक ब्राह्मण ब्रह्मचारी उनसे मिलता है। ]

ब्रह्मचारी—महाशय ! आप कौन है ? वेषभूषा से तो आप राजकुमार से दृष्टिगोचर हो रहे हैं। आपकी लम्बी-लम्बी उलझी हुई जटाएँ और तपस्वियो की-सी पोशाक मन मे सन्देह उत्पन्न करती है। एक ओर तो ऋष्यमूक पर्वत की ये पत्थरीली कठोर घाटियाँ, भयकर आँधी और दु सह धूप और दूसरी ओर आपके मनमोहक सुन्दर कोमल अग—ये सब क्यो हें ?

राम—ब्राह्मणकुमार ! हम राम-लक्ष्मण दोनो भाई है और कोसलराज महाराज दशरथ के पुत्र है। पिता ने हमे १४ वर्ष का वनवास दिया है। हमारे साथ एक सुन्दर सुकुमारी स्त्री और थी। यहाँ राक्षसों ने मेरी धर्मपत्नी को हर लिया है। इन भयकर वनो मे हम उसे ही खोजते फिरते है। (राम के कण्ठ रुँध जाते है और नेत्रो से आँसू

टपक पड़ते है) युवक ब्राह्मण, आप यहाँ कहाँ रहते है? क्या आपको इस सम्बन्ध मे कुछ जानकारी है?

**ब्रह्मचारी**—राजकुमार! सच तो यह है कि मैं एक वानर जाति का मनुष्य हूँ। मैंने आपके सम्मुख यह छद्मवेष धारण कर एक छल रचा है।

**[ ब्रह्मचारी की संशययुक्त बात सुन कर लक्ष्मण उद्विग्न होकर शस्त्रों पर हाथ रखते है, और आक्रमण के लिए सतर्क हो जाते है। ]**

**राम**—छली और कपटी मनुष्यों की भाषा इस प्रकार की नही होती, युवक! तुम अवश्य ही एक ब्रह्मचारी हो—एक उत्तम पुरुष हो।

**ब्रह्मचारी**—दूरदर्शी राजकुमार! मै इसी ऋष्यमूक पर्वत पर वानर राज सुग्रीव के साथ रहता हूँ। महाराज सुग्रीव इस समय महान् सकट मे है। आप उनकी सहायता करिये—वे सहस्रो वानरो को चारो दिशाओ मे भेज कर आपकी धर्मपत्नी की खोज निकालेगे।

**राम**—ब्रह्मचारी, आपने अपना नाम हमे क्यो नही बताया?

**ब्रह्मचारी**—कोसलकुमार! मैं अपना नाम आपको केवल एक शर्त पर बता सकता हूँ।

**राम**—वह क्या?

**ब्रह्मचारी**—मैं आजन्म रामदास बना रहूँ।

लक्ष्मण—भ्राता ! । (उद्विग्न होकर)

राम—लक्ष्मण ! शान्त। भक्त के लिए अधिक परिचय की आवश्यकता नही होती। ब्रह्मचारी ! मुझे मंजूर है।

[ ब्रह्मचारी अपना असली स्वरूप प्रकट कर श्रीराम के चरणों मे गिर पड़ते है और श्रीराम उन्हे उठा कर हृदय से बार-बार लगाते है—तीनो के नेत्रों से प्रेमाश्रु उमड़ने लगते है। ]

ब्रह्मचारी—(दोनो हाथ जोड़ कर) प्रभु ! केवल हनुमान ही रामदास कहलाने का अधिकारी है। (तीनों हँस पड़ते है)

[महावीर हनुमान अपने विशाल स्कन्धो पर राम और लक्ष्मण को चढ़ा लेते है और पवन के सदृश्य तीव्र वेग से ऋष्यमूक पर्वत के गगनचुम्बी शिखरो की ओर लपकते हुए दृष्टिगोचर होते है ]

यवनिका-पतन

# द्वितीय दृश्य

[ स्थान : ऋष्यमूक पर्वत शिखर पर एक विशाल शिलाखंड पर वानरराज सुग्रीव विराजमान है। सुग्रीव

के सम्मुख राम, लक्ष्मण और हनुमान बैठे हुए विचार कर रहे हैं।]

**सुग्रीव**—(नेत्रो में जल भर कर) कोसलकुमार! आप निश्चिन्त रहे—मिथिलेश कुमारी जानकी जी अवश्य मिल जाँयगी। मैं एक बार यहाँ मंत्रियो के साथ बैठा हुआ कुछ विचार कर रहा था, तब मैंने राक्षसों के वश में पड़ी बहुत विलाप करती हुई सीताजी को आकाश-मार्ग से जाते देखा था। हमे देखकर उन्होने 'राम! राम!! हे राम!!!' पुकार कर वस्त्र गिरा दिया। हनुमान, वह दिव्य वस्त्र आपको क्यो नही दिखाते? (हनुमान लपक कर वस्त्र लेने जाते है)

**राम**—वानरराज! मुझे यह तो बताओ, आप इस भयकर पर्वत पर क्यो रहते है?

**सुग्रीव**—(एक दीर्घ निःश्वास खींचकर) राजकुमार! यह एक अत्यधिक जटिल कथा है। सच तो यह है कि कभी-कभी मनुष्य भ्रम के चक्कर मे पड़कर अपने विवेक को खो बैठता है। वालि और सुग्रीव दोनो भाई भी भ्रम के ही शिकार है। यह मनोवैज्ञानिक रहस्य है।

**राम**—आप सच कहते हैं वानरराज! मनुष्य मायावश होकर सब कुछ भूल जाता है। हाँ, फिर . . ।

**सुग्रीव**—वालि और मैं दो सहोदर भाई है। वालि और सुग्रीव का परस्पर का प्रेम एक आदर्श था। सहसा

एक बार मायावी दानव हमारी राजधानी किष्किन्धा में आया और अर्द्धरात्रि को नगर के प्रवेशद्वार पर आक्रमण कर दिया। बालि जैसा महान् योद्धा इस मायावी-आक्रमण को कब सहन कर सकता था? उसने शत्रु का उसी क्षण पीछा किया और मायावी को वहाँ से भागते ही बन पडा। मै भी भाई की सहायतार्थ उसके पीछे-पीछे चला। वह धूर्त मायावी दानव एक भयानक पर्वत की गुफा मे जा घुसा। बालि एक क्षण रुका और मुझे देखकर आश्चर्य से पूछा, "अरे सुग्रीव ! तुम भी यहाँ....। ठीक है। देखो, मायावी को जीवित छोडना किष्किन्धा के लिए अच्छा नही है। तुम एक पक्ष तक मेरी यहाँ प्रतीक्षा करो। यदि इस अवधि मे मै लौटकर न आऊँ, तो समझ लेना बालि । अरे, रो पडे सुग्रीव ! देखना किष्किन्धा का राज्य-सिहासन सूना न रहे—अंगद तुम्हारे हाथ मे है।" यह कह कर महा वीर बालि एक क्षण मे गुफा मे प्रवेश कर गए। मित्र, मैने वहाँ एक मास तक बालि की प्रतीक्षा की, पर बालि नही आये। गुफा मे से रक्त की बडी-भारी धारा निकली। मै डर गया। मैने समझा कि मायावी ने भाई को मार डाला, अब आकर मुझे मारेगा। किष्किन्धा का क्या होगा? बालि के आदेश का क्या होगा? मै मायावी से लड़ना चाहता था, पर बालि के ये शब्द मेरे कानो मे जोर-जोर से गूँज रहे

थे—"बालक अंगद तुम्हारे हाथ में है, किष्किन्धा का राज्य-सिंहासन सूना न रहे।" अत मैंने गुफा के प्रवेशद्वार पर एक विशाल शिलाखण्ड उठा कर लगा दिया और वहाँ से भाग आया। पर, वालि नही मरा था, वालि ने मायावी को मारा था। वह रक्त की धार मायावी के रक्त की धार थी। मुझे भ्रम हो गया था, क्योंकि वालि ने एक पक्ष की अवधि दी थी।

जब वालि किष्किन्धा लौट कर आया, तो मुझे राज्य-सिंहासनारूढ देखा। उसके भी चित्त मे भ्रम उत्पन्न हो गया और उसने समझा कि सुग्रीव ने राज्य के लोभ से ही गुफा के द्वार पर शिलाखण्ड रक्खा था। उसने मुझे शत्रु के समान बहुत अधिक मारा और मेरा सर्वस्व तथा मेरी स्त्री को भी छीन लिया। हे मित्र ! अब मै वालि के डर से इस ऋष्यमूक पर्वत पर एकान्त जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। वालि के भय से मैं अब भी त्रस्त हूँ, पर शापवश होकर वह यहाँ नही आ सकता।

**राम**—सुग्रीव ! इस कथा मे तुम्हारा दोष तो अणु-मात्र भी नही, वालि जैसे वीर को तुम्हारे साथ ऐसा व्यवहार नही करना चाहिए था। (भुजाएँ फड़का कर) सुनो, मै एक ही बाण से वालि को मार गिराऊँगा और त्रिभुवन मे उसकी रक्षा करने वाला कोई भी न होगा। जो लोग मित्र के दुख से दुखी नही होते, उन्हे देखने से ही बड़ा पाप

लगता है। अपने पर्वत के समान दुखो को धूल के समान और मित्र के धूल के समान दु ख को सुमेरु पर्वत के समान समझना चाहिए।

**सुग्रीव**—तपस्वीराज ! वालि मेरा भाई है। इस राष्ट्र को वालि जैसे शूरवीरो की आवश्यकता है। अब मेरी हार्दिक इच्छा है कि सब कुछ छोड कर मै भगवान का भजन करूँ और सीताजी की खोज मे अपने शेष जीवन को खपा दूँ।

**राम**—वानरराज ! आपके मुख से मै यह क्या सुन रहा हूँ ? वालि का भाई सुग्रीव इतना कायर नही हो सकता, फिर रघुवंशियों के वचन मिथ्या नही हुआ करते। क्या आपको मेरे धनुष-बाण पर भरोसा नही ? उठो, आज ही वालि को ललकारना होगा।

[शस्त्रों से सुसज्जित होकर राम, लक्ष्मण और सुग्रीव वालि से लड़ने के लिए प्रस्थान करते हैं ]।

यवनिका-पतन

## तृतीय दृश्य

[ स्थान—किष्किन्धा। एक रणांगण में वालि और सुग्रीव द्वंद्व युद्ध में संलग्न हैं। सुग्रीव की हार पर हार हो

रही है। अन्त में वाली एक घातक घूँसे का सुग्रीव पर प्रहार करता है। सुग्रीव एक भयंकर चीत्कार के साथ व्याकुल होकर भागता है और वृक्षों की आड़ में खडे हुए श्री राम की शरण में जाता है ]

राम—सुग्रीव, हताश होने की आवश्यकता नहीं। सबसे बडी समस्या यह है कि वालि और सुग्रीव का एक-सा रूप है। इसी भ्रम से मैं वालि को न मार सका। अब केवल एक उपाय है—मैंने आपके लिए पुष्पो का हार बनाया है। (पुष्पो का हार सुग्रीव के गले में डालते है) मित्र ! अब आप अभय है—इस वार हमारी विजय निश्चित है। आपको पुन. वालि को ललकारना होगा। शीघ्रता करो, विलम्ब व्यर्थ है।

[ सुग्रीव रणांगण में पुनः वालि को ललकारता है और वालि जयघोष करता हुआ फिर सुग्रीव पर टूट पड़ता है। दोनों मे परस्पर घोर सग्राम होता है। राम एक विशाल वृक्ष की आड़ से यह संघर्ष देखते हैं। जब भय मान कर सुग्रीव हृदय से हार जाता है, तब राम तान कर वालि के हृदय में बाण मारते है। बाण के लगते ही वालि व्याकुल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ता है, पर, जब, वालि राम को बाण लिये, धनुष चढ़ाये हुए और लाल नेत्र किये हुए देखता है, तो हुंकार करके पुनः उठने की चेष्टा करता है, किन्तु लड़खड़ा कर पुनः पृथ्वी पर गिर पड़ता है ]

वालि—क्या आप एक क्षत्रीय है? सच्चे क्षत्रीय तो सदा धर्म की रक्षा करते है। युवक! आपने एक अधर्म-युद्ध किया है। एक व्याध की तरह छिप कर आपने मुझे क्यों मारा? मै आपका वैरी और सुग्रीव प्यारा? आपके समान तेजस्वी युवक के लिए यह एक लज्जा की बात है। क्या आज मे ससार मे धर्मयुद्ध नही रहा? क्या क्षत्रीय भी अधर्म मे रत हो गये है?

राम—महाबाहु वालि! मैने आपको धोखे से मारा है। क्षत्रीय कभी अधर्म-युद्ध मे सलग्न नही होते। सुनो, छोटे भाई की स्त्री, बहिन, पुत्र की स्त्री और कन्या ये चारों समान है। इनको जो कोई बुरी दृष्टि से देखता है, उसे मारने मे सच्चे क्षत्रियो को कुछ भी पाप नही होता।

वालि—सुग्रीव एक विश्वासघाती भाई है।

राम—यह आपका भ्रम है। अपने जीवन की अन्तिम घड़ी मे इस भ्रम को दूर कर दो।

वालि—यह कैसे?

राम—अवधि समाप्त होने पर मायावी दानव की गुफा में आपको मरा जानकर ही सुग्रीव ने गुफा के प्रवेश-द्वार पर एक विशाल शिलाखण्ड रक्खा था।

वालि—तो क्या मुझे धोखा हुआ?

राम—हाँ, वालि और सुग्रीव दोनो ही भ्रान्त हो गए।

वालि—(वाण के घाव की वेदना से तड़प कर) आह ! आह !! पर अब क्या हो सकता है ?

राम—महावीर ! आपके जैसा बाँका योद्धा इस पृथ्वी पर कभी नहीं हुआ, किन्तु मैं विवश था। (वालि के सर पर हाथ रखकर रुदन करते हैं) मुझे कभी इसका प्रायश्चित करना होगा।

(रोते हुए तारा और अंगद का प्रवेश)

वालि—युवक ! क्या वालि का वध वालि की हार है ?

राम—कदापि नहीं किष्किन्धा नरेश !

वालि—(अपने पुत्र की ओर संकेत करके) यह ... अंगद. ..मेरा पुत्र है, इसे स्वीकार कीजिए । आह ! सुग्रीव अ... मा ...राम ! राम !! राम !!!

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं ।
मारेहु मोहि व्याध की नाईं ॥
मैं वैरी सुग्रीव पिआरा ।
अवगुन कवन नाथ मोहि मारा ॥

(वालि के प्राण-पक्षी उड़ जाते हैं)

पटाक्षेप

# कौटिल्य

# पात्र-परिचय

## पुरुष-पात्र

| | |
|---|---|
| १—विष्णुगुप्त | (चाणक्य) |
| २—चणक | (चाणक्य के पिता) |
| ३—शकटार | (मंत्री) |
| ४—राक्षस | ( ,, ) |
| ५—मगधेश्वर नन्द | ( ,, ) |
| ६—कात्यायन | |

## स्त्री-पात्र

| | |
|---|---|
| १—सुभाषिनी | (मंत्री-कन्या और अभिनेत्री) |

# कौटिल्य

## प्रथम दृश्य

[स्थान—महात्मा चणक का आश्रम। आश्रम के उपवन मे विष्णुगुप्त और सुभाषिनी बात-चीत करते हुए दिखाई पड़ते हैं]।

**विष्णुगुप्त**—बात-बात पर रुष्ट होना क्या तुम्हारा स्वभाव बन गया है, सुभाषिनी ? बस ! इतनी-सी बात पर ही यह उदासी। अरे ! रो पडी। देखती नही, मेरा तीर खाली गया है। उस वृक्ष मे होकर तुम्हारा तीर आरपार निकल गया।

**सुभाषिनी**—(हँसकर) वात्स्यायन ! तुम बडे नट-खट हो, कभी रुष्ट ही नही होने देते। सच बताओ, लक्ष्य-भेद किसने किया ?

**विष्णुगुप्त**—(गभीर होकर) सुभाषिनी ने. ।

**सुभाषिनी**—तुम झूठे हो, वात्स्यायन ! रग मे श्याम होने के साथ ही क्या तुम मन के भी काले हो ?

**विष्णुगुप्त**—यदि सुभाषिनी का हृदय काला है, तो

वात्स्यायन का इसमे क्या दोष ? सुभाषिनी की हार विष्णु की ही हार है ।

सुभाषिनी—(बात काटकर) परन्तु, विष्णु अजय है । क्या सुभाषिनी के सम्बन्ध मे भी ऐसा नही कहा जा सकता ?

विष्णुगुप्त—(दीर्घ निश्वास के साथ) जब तक वात्स्यायनके हृदय पर सुभाषिनी का राज्य रहेगा, तब तक संभव है ऐसा ही हो ।

सुभाषिनी—क्या इसमे भी कोई शंका है, हठी ब्राह्मण ?

विष्णुगुप्त—शंकावाली बात का तो भविष्य ही निर्णय करेगा, भोली बालिके ! उसके लिए अभी से चिन्तित क्यों ?

[आश्रम की ओर से सहसा किसी के उच्च स्वर से पुकारने का घोष होता है—'अरे द्रुमिल ! ओ विष्णु ! . . . .' आवाज को सुनकर विष्णु आश्रम की ओर दौड़ता है और उसके पीछे दौड़ती है कोमलांगी सुभाषिनी। आश्रम की कुटिया के द्वार पर एक शिलाखण्डपर बैठे हुए महात्मा चणक भाषण करते हुए दिखाई पड़ते हैं] ।

चणक—यह महापद्म का जारज पुत्र नन्द, महापद्म का हत्याकारी नन्द, मगध मे राक्षसी राज्य कर रहा है । अहिंसा की आड़ मे नित्य क्रूर कर्म होते है। मंत्री शकटार का अपमान एक असाधारण घटना है। बौद्ध धर्मावलम्बी नन्द के विरुद्ध कुछ करना ही होगा । नागरिकों ! सावधान !

**उपस्थित श्रोता**—महात्मा चणक के इंगित पर हम सब मर मिटेंगे।

**मन्त्री शकटार**—क्या ये सब मेरे ही कारण होने जा रहा है? मैं कल ही त्यागपत्र दे दूंगा। जिसके अन्न से मैं पला हूँ, क्या उसी राजसत्ता के विरुद्ध मुझे विद्रोह करना होगा।

**चणक**—मित्र! यह व्यक्ति विशेष का प्रश्न नहीं है। इस समस्या के साथ जन साधारण का भाग्य जुडा है। सच्चा ब्राह्मण अन्याय को कैसे सहन करेगा? मन्त्री शकटार के उदासीन रहने पर भी चणक नन्द के क्रूर कर्मो को भस्म करने के लिए दावानल बन जायगा।

**शकटार**—ठीक है भाई! पर मुझे अबोध नन्द पर अब भी दया ।

**[शकटार का वाक्य पूर्ण होने से पूर्व ही एक आश्रम वासी आकर मस्तक नवा कर सूचना देता है]।**

**आश्रमवासी**—गुरुदेव! आश्रम से तक्ष-शिला जानेवाले सब छात्र प्रस्तुत है।

**[महात्मा चणक विद्यार्थियोके स्वागतार्थ आगे बढ़ते है और सब विद्यार्थी हाथ-जोड़ कर गुरु के सम्मुख खड़े दिखाई पड़ते हैं]।**

**चणक**—मेरे प्राणो से प्यारे विद्यार्थियो! आप सब मगध के भावी भाग्य विधाता बनने तक्ष-शिला जा रहे है। आप मगध की आशा है, मगध के स्वाभिमान है और सर्वस्व

है। देखना, मगध के आश्रम की लाज तुम्हारे हाथ है। (अपने पुत्र विष्णुगुप्त के विशाल स्कन्धों पर हाथ रखकर भर्राए हुए कण्ठ से) विष्णु! बेटा!! यदि मगध के योग्य सच्चे ब्राह्मण न बन सको, तो मुझे और मगध को जीवित लौटकर अपना मुख न दिखाना। जाओ, भगवान् आपका कल्याण करे।

**[सब शिष्य प्रस्थान करते हैं—केवल सुभाषिनी रह जाती हैं।]**

**सुभाषिनी**—गुरुदेव! (रोते हुए) मुझे भी तक्षशिला जाने की आज्ञा दीजिये। क्या तक्षशिला में अपने आश्रम के समान बालिकाओं का शिक्षण नहीं होता?

**चणक**—यह बात नहीं है बेटी! मुख्य-मुख्य शास्त्रों का अभ्यास किये बिना और आश्रम की अन्तिम परीक्षा में उत्तीर्ण हुए बिना मैं तुम्हें तक्ष-शिला नहीं भेज सकता। अभी तुम्हें यहाँ ही अध्ययन करना होगा।

**शकटार**—(अपनी पुत्रीके आँसू पोंछते हुए) हाँ बेटी! महात्मा चणक की आज्ञा शिरोधार्य है, चलो।

[दोनों का प्रस्थान और पर्दा गिरता है]

# द्वितीय दृश्य

[सरस्वती के उपवन में महाराज नन्द कुसुमोत्सव मना रहे हैं। मन्दिर और उपवन के पथ में सुभाषिनी और महाराज नन्द के प्रधान मंत्री राक्षस बातें करते हुए दृष्टि-गोचर होते हैं]।

**राक्षस**—सुभाषिनी! हठ न करो।

**सुभाषिनी**—नही मत्री! उस ब्राह्मण को दण्ड दिये बिना सुभाषिनी जीवित नही रह सकती। मैं बौद्ध-स्तूप की पूजा करके लौट रही थी, उस कठोर, घमण्डी ब्राह्मण ने व्यग किया। राक्षस! उसने कहा—'बौद्ध नर्तकियो के लिए भी एक धर्म की आवश्यकता थी। चलो, अच्छा ही हुआ। ऐसे धर्मावलम्बियो की भी कमी नही है।'

**राक्षस**—यह उसका अन्याय था।

**सुभाषिनी**—पर, अन्याय का प्रतिकार भी तो है। किसी को किसी पर लाछन लगाने का क्या अधिकार है?

**राक्षस**—मुझे समझने मे क्या आप भूल कर रही है? मै एक निश्चित सीमा तक ही बौद्धमत का अनुयायी हूँ। बौद्धमत की छत्रछाया मे रहकर एक दुराचारी भी सदाचारी बन सकता है।

**सुभाषिनी**—नही, भावी राज-चक्र मे भी आपको बौद्धमतावलम्बियों का ही समर्थन करना पडेगा। बोलो, क्या तय्यार हो?

राक्षस—मैं प्रस्तुत हूँ।

सुभाषिनी—जीओ, राक्षस!

[सहसा महाराज नन्द का प्रवेश]

नन्द—आज महामन्त्री सुभाषिनी से छुप-छुपकर क्या बातें कर रहे हैं?

राक्षस—सुभाषिनी से बौद्ध-धर्म की शिक्षा सुन रहा हूँ।

सुभाषिनी—महाराज! आज आप इतने उद्विग्न क्यों हैं?

नन्द—सुन्दरी! कहीं भी चैन नहीं मिलता। क्या कहूँ, किससे कहूँ? सेनापति मौर्य का पुत्र चन्द्रगुप्त ही विद्रोहियों का नेता बना है। यह सब उस भयानक ब्राह्मण का षडयन्त्र है।

सुभाषिनी—ब्राह्मण प्रायः षडयन्त्रकारी ही होते हैं, अब यह कौन-सा ब्राह्मण आ गया महाराज?

राक्षस—यह सब जानकर तुम क्या करोगी, सुभाषिनी?

सुभाषिनी—क्या इसमें भी कोई रहस्य है? अच्छा राक्षस! जाती हूँ। आज्ञा हो महाराज! सरस्वती के मन्दिर में महारानी के सम्मुख अभिनय करना है।

[मस्तक झुका कर सुभाषिनी प्रस्थान करती है और पर्दा गिरता है। पुनः मगध के एक निर्जन साँय-साँय करते हुए पथ में सुभाषिनी की एक भयंकर मनुष्य से भेंट होती है]।

विष्णुगुप्त—इस निर्जन पथ में अर्द्ध रात्रि के समय जानेवाली तुम कौन हो, देवी?

**सुभाषिनी**—एक महिला का इस प्रकार मार्ग रोककर खडे होने वाले तुम कौन हो, भयकर पुरुष ?

**विष्णुगुप्त**—तुम्हारा क्या नाम है ?

**सुभाषिनी**—इससे प्रयोजन ? तुम कौन हो ?

**विष्णुगुप्त**—मै चन्द्रगुप्त का गुरु विष्णुगुप्त हूँ, मुझे लोग चाणक्य भी कहने लगे है। यहाँ आओ, सुभाषिनी !

**सुभाषिनी**—वात्स्यायन !

**विष्णुगुप्त**—हाँ ! सुभाषिनी !

**सुभाषिनी**—तुम कब आये ?

**विष्णुगुप्त**—क्रान्ति के साथ ।

**सुभाषिनी**—समझ गई। पिताजी और गुरुदेव कहाँ हैं ?

**विष्णुगुप्त**—अन्धकूप मे कारावास की यातना भोग रहे है। गुरुदेव निर्वासित है। उनका गौवन छीना जा चुका है। हमारे आश्रम पर बौद्ध विहार बन गया है। हाँ, पर, इन सब बातो से तुम्हे क्या ? नन्द की रगशाला की प्रधान अभिनेत्री जो बन गई। सुना है कि सुभाषिनी कट्टर बौद्ध धर्मावलम्बिनी भी है।

**सुभाषिनी**—इसमे कौन-सा आश्चर्य है ? मनुष्य तो परिस्थितियो के हाथ की कठपुतली है।

**विष्णुगुप्त**—चाणक्य ! परिस्थितियो को तोड-मरोड़ कर अपने अनुकूल बनाना खूब जानता है। जाओ सुभाषिनी ! अब तुम्हारा कोई मार्ग नही रोकेगा।

सुभाषिनी—दीपक जलाकर कहाँ चले जा रहे हो, वात्स्यायन।

विष्णुगुप्त—चाणक्य को अंधकार भी पसन्द है।

[विष्णुगुप्त अंधकार में अदृश्य होते हैं और सुभाषिनी अवाक और स्तम्भित रह जाती है]।

## तृतीय दृश्य

[सिन्धु नदी के तट पर घास की एक पर्णकुटी में संगमरमर की एक शिला पर, एक तपस्वी के वेष में भारतवर्ष के महान् क्रान्तिकारी राजनीतिज्ञ चाणक्य बैठे-बैठे मगध के वयोवृद्ध अमात्य कात्यायन से बातें कर रहे हैं]।

विष्णुगुप्त—वररुचि ! यदि तुम मेरा रहस्य खोल दोगे तो बना बनाया काम बिगड़ जायगा, मगध-साम्राज्य पुनः संकट में पड़ गया है। चन्द्रगुप्त मगध का सम्राट बनकर कुछ घमण्डी-सा बन गया है, उसकी आँखें भी तो खोलनी है। जब तक सिल्यूकस का सैन्यबल भारतवर्ष में है, तब तक देश में पूर्ण शान्ति स्थापित नहीं हो सकती।

कात्यायन—ब्राह्मण हो भाई, दया के सागर हो, तुम्हीं मान जाओ। मैं वृद्ध हूँ, मुझसे अब राज-काज नहीं चलता। चाहता हूँ कि इसी सिन्धु के तटपर कुछ दिन रहकर अपना वार्तिक पूरा कर लूँ।

**विष्णुगुप्त**—असभव, चाणक्य पुन. मन्त्रित्व-ग्रहण नही कर सकता। यवन-सेना भारत के वक्षस्थल पर शूल की तरह खडी है। तुम्हे शीघ्र मगध की यात्रा करनी होगी।

**कात्यायन**—आजकल राक्षस सिल्यूकस का एक वेतन-भोगी सेवक बन गया है। यह सब उसी का कुचक्र है।

**विष्णुगुप्त**—तुम निश्चिन्त रहो, केवल मगधका आन्तरिक शासन सम्भाल लो, इधर मै सब ठीक करूँगा। हाँ! यदि सुभाषिनी को भेजते तो कार्य मे आशातीत सफलता मिलती। समझे!

**कात्यायन**—विष्णु! गृहस्थ-जीवन कितना सुन्दर है?

**विष्णुगुप्त**—अब हम-तुम साथ ही विवाह करेगे!

**कात्यायन**—नही विष्णु! मेरी गृहणी तो घर पर है और फिर यह वृद्धावस्था .....।

**विष्णुगुप्त**—कात्यायन! तुम वास्तव मे एक सहृदय ब्राह्मण हो। करुणा और सौहार्द का एक साथ उद्रेक ऐसे ही उदार हृदयो मे होता है। प्रकृति! शक्ति! देख, तुझे ब्राह्मण के दो स्वरूप बताऊँ। एक ओर करुणा का करुणालय उमड रहा है, क्षमा और सहानुभूति की नदियाँ उमड रही है, हर्ष, हँसी और आशा के स्रोत कल-कल नाद से नाच रहे है। दूसरी ओर मेरा पाषाण-हृदय हिमालय-सा बनकर कठोर से कठोर दण्ड देने मे भी नही हिचकिचाता, मुझे केवल सफलता चाहिए। मुझे अपने हाथो खड़े किये हुए एक महान

साम्राज्य को फलता-फूलता देखना है। हा! हा!!
हा! [ठहका मार कर भयंकर हँसी हँसते हैं]।

**कात्यायन**—शान्त, तुम हँसो मत कौटिल्य, तुम्हारी हँसी तुम्हारे क्रूर दण्ड से भी अधिक भयकर है। वह देखो! कौन आ रही है? सावधान! इस सुकुमार और निरापराध कली को भी निष्ठुरता से कही न कुचल देना। जाता हूँ ब्राह्मण! इस वृद्धावस्था मे भी मगध का प्रधान मत्री बनना ही पड़ेगा।

**(कात्यायन का प्रस्थान। ब्राह्मण चाणक्य अपनी बिखरी हुई जटा को बाँध कर एक रमणी का स्वागत करने के लिए सिन्धु-तट की ओर बढ़ते हुए दिखाई पड़ते हैं। आगन्तुक महिला कौटिल्य को प्रणाम करती हुई दिखाई पड़ती है।)**

**विष्णुगुप्त**—**(बालू के एक टीले पर बैठते हुए)** सुभाषिनी! तुम यहाँ कैसे?

**सुभाषिनी**—आपकी अनुपस्थिति मे सम्राट ने. . .। पिताजी ने मुझे आपकी सेवा में भेजा है और कहा है कि शीघ्र मगध नही लौट चले तो बना बनाया काम बिगड सकता है।

**विष्णुगुप्त**—मै मगध क्यो चलूँ? मगध मे मेरे लिए अब क्या रक्खा है। यह महान् साम्राज्य महाराज चन्द्रगुप्त का है, महात्मा कात्यायन और महामंत्री शकटार के हाथ मे शासन की बागडोर है, फिर चिन्ता किस बात की? याद है! तक्षशिला के लिए विदा करते समय पिताजी ने कहा था—

'यदि मगध के योग्य सच्चे ब्राह्मण न बन सको तो मुझे और मगध को अपना मुँह न दिखाना।' जब तक यवन सेना भारत की पवित्र भूमि पर मण्डराती रहेगी, तब तक कौटिल्य को चैन कैसे आ सकता है ? तू ही बता सुभाषिनी, मै मगध कौनसा मुख लेकर लौटूं ? हाँ ! केवल बचपन की एक धुंधली-सी स्मृति कभी-कभी हृदयाकाश मे तारावली के सदृश्य टिमटिमाने लगती है, परन्तु अब तो वह भी .. .. ।

**सुभाषिनी**—नीलाम्बर की छत के नीचे स्वनिर्मित साम्राज्य में स्वच्छन्द विचरनेवाले निर्भीक ब्राह्मण के मुख से आज मै ये कैसी बाते सुन रही हूँ ?

**विष्णुगुप्त**—ये सब कुछ तुम्हे सुनना ही होगा, सुभाषिनी ! कौटिल्य को क्या कभी दया आती है ? भारतवर्ष की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए तुम्हे एक और भयकर अभिनय करना होगा। देश की सुरक्षा के लिए जब कौटिल्य सब कुछ बलिदान कर सकता है, तो सुभाषिनी ही पीछे क्यो रहे ?

**सुभाषिनी**—वात्स्यायन ! स्वदेश के लिए सर्वस्व तक बलिदान किया जा सकता है, पर अभिनय करती-करती अब मै थक गई हूँ।

**विष्णुगुप्त**—कौटिल्य अत्यधिक क्रूर है, सुभाषिनी ! वह कब मानेगा। जानती हो, यवनो के वेतन भोगी, एक राष्ट्रद्रोही राक्षस से प्रणय का अभिनय तुम्हे पुन करना होगा। मेरे लिए नही, देश की सुरक्षा के लिए ।

**सुभाषिनी**—क्रूर, निर्दयी, पाषाण-हृदयी ! न जाने तुम किस धातु के बने हो ? हाय मेरा भाग्य !

**(सिसकियाँ भर कर रोती हैं)**

**विष्णुगुप्त**—सुभाषिनी, तुम्हारा करुण क्रन्दन मेरे कठोर निर्णय को नही बदल सकता। मैं तुम्हे दण्ड दूँगा। कौटिल्य के हृदय मे क्षमा के लिए कोई स्थान नहीं है। हाँ ! तुमसे बढ़कर इस ससार मे मेरा हितैषी इतर कौन हो सकता है ? सुभाषिनी और राक्षस के हाथ मे चद्रगुप्त के महान् साम्राज्य की बागडोर सौपकर विष्णुगुप्त हिमालय के अंचल मे तपस्या करेगा।

**सुभाषिनी**—महापुरुष ! मुझे क्षमा करो। मै सब समझ गई। सहस्रवार प्रणाम ! **(झुककर दण्डवत करती हैं)** भाई, मुझे आशीर्वाद दो। मै अभी चली।

**(अपने आँसुओं को साड़ी से पोछते हुए सुभाषिनी का प्रस्थान।)**

**विष्णुगुप्त**—**(स्वतः)** स्त्री मेरी साधना के मार्ग मे एक अर्गला है, जिसे मैं कई वर्षों पूर्व ही तोड़ चुका। एक धुँधली-सी रेखा बचपन की याद को लेकर खिचा करती थी, उसको भी मैंने आज मिटा दिया। हा ! हा ! ! . . . .हा !

**(ठहका मार कर जोर-जोर से पागलो की तरह भयंकर हँसी हँस कर गर्जना करते हैं।)**

**(पटाक्षेप)**

# ताड़-गुड़

# पात्र-परिचय

## पुरुष-पात्र

१. सक्सेना (काले रग का इकहरे शरीर का आदमी)

२. गोयल (एक गोरा और मोटा आदमी)

३. भार्गव (आधुनिक ढग का व्यक्ति)

४. सम्पादक (एक पडित जी)

# ताड़-गुड़

## ( एक सरस कथोपकथन )

[समय—रात्रि का प्रथम चरण। स्थान—एक ड्राइंग रूम। कमरे के बीच एक गोल मेज है—मेज के चारों ओर कुर्सियों पर कुछ मित्र बैठे हुए बातें कर रहे हैं।]

सक्सेना—आज तो मारे ठड के कपकपी छूट रही है, क्यो मि० गोयल ?

गोयल—मुझे आश्चर्य है, मि० सक्सेना ?

सक्सेना—क्यो, क्या तुम्हे ठड नही लगती ?

गोयल—सारा शरीर काँप रहा है। पर, ताज्जुब तो यह है कि सम्पादकजी का आधा डिब्बा सिगरेट का खाली करने पर भी तुम्हे ठड सता रही है।

(सब हँसते है)

सम्पादक—(सिगरेट के डिब्बे की ओर देखते हुए) नही कोई हर्ज नही, आप तो और पीओ सक्सेना बाबू ? गोयल, तुम बड़े मुँहफट हो जी ! देखते नही, सक्सेना झेप गये।

**सक्सेना**—यह सम्पादकजी के व्यंग हमको प्रभावित नही कर सकते। यदि अपना भला चाहते हो तो, चाय जल्दी से पिला दो, वरना चार-चार सिगरेट एक साथ जलाऊँगा और पण्डितजी रात भर पलग पर पड़े पड़े तारे गिनते रहेगे।

**भार्गव**—यह बात हुई है पते की, मैं भी यही कहने वाला था।

**सक्सेना**—लेकिन आप कहते कैसे, खुदा ने आपको हिम्मत ही नही दी।

(सब हँसते हैं)

**सम्पादक**—मै भी भार्गव के मुंह से यही सुनना चाहता था। चाय तो पहले ही तैयार है। **(ज़ोर से आवाज़ देकर)** अरे रामचरण, अरे ओ रामचरण ! जरा चाय जल्दी ले आओ, भार्गव साहब मारे ठंड के सिकुड़े जा रहे है।

(पुनः सब हँसते हैं)

**(नौकर चाय के प्याले लाकर मेज़ पर रखता है)**

**सम्पादक**—रामचरण ! भार्गव साहब चाय नही पीते, इन्हे दूध देना।

**रामचरण**—जो हुक्म।

**(इसके बाद चारों स्वाद लेकर पीना शुरू करते हैं )।**

**सम्पादक**—बोलो गोयल ! चाय कैसी बनी ?

**गोयल**—पंडितजी, चाय क्या बनी है ? कमाल है !

**सक्सेना**—भाई, वाकई कमाल है ? क्या मैं भी कुछ कहूँ ? सब—**(एक स्वर से)** कहिये, कहिये।

**सक्सेना**—इसमे तो एक अजीब सुगन्ध भी है, जिससे मेरा तो जी भरा जा रहा है। पडितजी, एक कप और देना पडेगा।

**सम्पादक**—अरे भाई, एक क्या, आप दो पीजिये। भार्गव साहब, आपको दूध कैसा लगा ?

**भार्गव**—पडितजी, दूध पीने का मजा ही जिन्दगी में आज आया है।

**सक्सेना**—यह कैसे ?

**भार्गव**—दूध का यह सुनहरा रग, यह महक और यह स्वाद . बस, कुछ न पूछिए। पर, पडितजी, यह तो बताइए आज यह क्या जादू है ?

**सक्सेना**—**(भार्गव को चिढ़ाते हुए)** मियाँ, अण्डे का पाउडर है, अण्डे का ।

**भार्गव**—चोर को तो साहूकार भी चोर ही दिखाई पडता है। यह तुम्हारे घर का दूध होता तो मैं विश्वास कर लेता।

**सम्पादक**—जी नही, आप लोग यह सुन कर आश्चर्य करेंगे कि इस चाय और दूध में 'ताड़-गुड' का मीठा है।

**भार्गव**—**(चिन्तित होकर)** पडितजी ! ताड से तो ताडी बनती है। आज आपने यह क्या किया ?

सम्पादक—घबराइए नही भार्गव साहब ! आपका धर्म भ्रष्ट नही होगा, मैं भी तो एक ब्राह्मण हूँ ? क्या आप जी, अंगूर, अनार, सन्तरा आदि पदार्थ नही खाते ?

गोयल—इन्हे तो सभी प्रयोग में लाते है।

सक्सेना—परन्तु, इनके रस से मदिरा भी बनती है।

भार्गव—यह एक दूसरी बात है, एक अलग प्रयोग है।

सम्पादक—यही बात ताडी पर भी है। खजूर, ताड़, नारियल, सैगो आदि वृक्षो को आदमी छेद कर रस निकालते है ? इस रस को 'नीरा' कहते है। ताड़-गुड़ बनाने वाले इसी ताजे नीरे को उबाल कर गुड़ बना लेते है। नीरे का शहद जैसा गुड़ बनता है। गन्ने के गुड से यह गुड़ अच्छा होता है। गन्ने का गुड़ सिर्फ मीठा होता है, ताड़-गुड़ स्वादिष्ट होता है। इसकी महक और स्वाद मन लुभाने वाले होते है। हमारे देश मे ताड़-गुड़ करोड़ो रुपयो का बन सकता है।

गोयल—यह तुम क्या कहते चले जा रहे हो, पडितजी ?

सम्पादक—भाई मैं सच कहता हूँ। राजस्थान में भी लाखो रुपयो का ताड़-गुड़ बन सकता है। इस समय राजस्थान मे अनुमानत. २० लाख खजूर के वृक्ष है। ये वृक्ष गुड और चीनी के भण्डार है।

सक्सेना—अच्छा तो पडितजी, यह रस कैसे निकालते है ?

सम्पादक—रस्सी की सहायता से खजूर के वृक्षो पर

छेदक चढते है और वृक्षो में छेद कर घडो मे नीरा इकट्ठा कर लेते है। नीरे के घडो मे पहले थोडा-सा चूना डाला जाता है। चूना एक रक्षक द्रव्य है। अत वह नीरा को खट्टा होने से रोकता है और उसमे उफान नही आने देता। इसके बाद नीरा को कडाही मे डाल कर गरम किया जाता है और फिर उससे गुड बना लेते है।

**भार्गव**—तो क्या वह चूना शरीर के लिए हानिकारक नही है?

**सम्पादक**—चूने का प्रभाव नीरा मे सुपरफास्फेट डाल कर मिटा दिया जाता है और चूना वैसे भी शरीर के लिए हानिप्रद नही है।

**भार्गव**—परन्तु, इसी रस से ताडी भी तो बनती है।

**सम्पादक**—ताड-गुड और ताडी की भिन्न-भिन्न पद्धतियाँ है। जौ से रोटी भी बनती है और मदिरा भी। रोटी को हम सब आदर से ग्रहण करते है और मदिरा त्याज्य है, घृणित है। इसी तरह ताजी नीरा से गुड, चीनी, मिश्री, आदि बनाई जाती है, पर खट्टी होने पर वह ताडी बन जाती है। अच्छे दूध से बीसो मिठाइयाँ बन सकती है, पर फटे दूध से कुछ नही बन सकता।

**सक्सेना**—हूँ! मैंने भी कल एक समाचार-पत्र मे ताड-गुड के विषय मे ऐसी ही बाते पढी थी। हाँ, सम्पादकजी,

क्या हमारी सरकार भी सामूहिक ढंग से ताड़-गुड़ बनाने की कोई योजना रखती है?

सम्पादक—हाँ, यह कार्य राजस्थान में भी १८ महीने से चल रहा है। पर, ताड़-गुड़ एक ऐसा ग्रामोद्योग है, जिसे व्यक्तिगत ढंग से ही चलाना अच्छा है। सरकार का इरादा ताड़-गुड़ का व्यापार करने का नहीं है और न वह इस उद्योग को किन्हीं पूँजीपतियों के हाथों में सौंपना चाहती है। सरकार का उद्देश्य ताड़-गुड़ की पद्धति का प्रचार करने से है कि जिससे प्रत्येक ग्रामीण स्वावलम्बी बन सके और राष्ट्र की उपज में वृद्धि हो।

गोयल—इसका मतलब तो यह है कि सरकार देहातियों में इस पद्धति का प्रचार कर मैदान से दूर हटना चाहती है।

सम्पादक—हाँ, तुम किसी हद तक ठीक कह रहे हो। जब राजस्थान का प्रत्येक ग्रामीण एवं नागरिक इस पद्धति से परिचित हो जायगा, तो यह उद्योग स्वतः ही चल पड़ेगा, क्योंकि प्रत्येक इन्सान स्वावलम्बी होना चाहता है।

भार्गव—क्या ताड़-गुड़ उद्योग से गन्ने की काश्त पर भी कोई प्रभाव पड़ेगा?

सम्पादक—ताड़-गुड़ उद्योग 'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन का सहायक है। गन्ने की काश्त पर ताड़-गुड़ उद्योग का सीधा प्रभाव यह पड़ेगा कि किसान खेतों में गन्ना बोने के बजाय अन्न उत्पन्न करेंगे। क्योंकि आजकल हजारों

एकड़ उपजाऊ जमीन गन्ने की काश्त ही घेर लेती है। ज्यों-ज्यों ताड-गुड उद्योग बढेगा, त्यों-त्यों गन्ने की काश्त घटेगी और ज्यादा अन्न उत्पन्न होगा। इतना ही नही गन्ने को उगाने मे, सींचने मे, काटने मे, पेलने मे और रक्षा करने मे बीसो झझट करने पड़ते है। वह तो किसान के खून का पानी बना देता है। पर खजूर के पेड लाखों की सख्या में खडे है। इनका रस लेने मे कुछ भी झझट नही करना पडता।

**सक्सेना**—हाँ, यह तो आपने ठीक कहा। पर, क्या यह उद्योग राजस्थान मे चल सकेगा ?

**सम्पादक**—क्यो नही, जब मद्रास और बगाल में लाखों रुपयो का गुड बनता है, तब राजस्थान मे ही ऐसी क्या बात है? राजस्थान मे लाखो खजूर के वृक्ष बेकार पड़े है। ये खजूर के वृक्ष राजस्थान की मरुभूमि में अमृत देगे। किसी योजना की सफलता अच्छे कार्यकर्ताओं, कर्मठ प्रचारको और जनता की सद्भावनाओ पर निर्भर रहती है। सरकार का कर्तव्य इस योजना को कार्यरूप मे परिणत कर लोगों मे शौक पैदा करने का है।

**भार्गव**—क्यो पंडितजी, ताड-गुड से मिठाइयाँ भी बन सकती है ? मैने कभी ताड-गुड नही देखा। क्या आप दिखला सकते है।

**(सम्पादक मेज की दराज से तीन कागज की पुड़ियाँ निकाल कर तीनों मित्रो के हाथ में सौंपते है और तीनों मित्र**

पुड़िया में से ताड़-गुड़ निकाल कर अपनी जिह्वा पर रखते हैं)

भार्गव—गुड़ क्या है, यह तो बनी बनाई मिठाई है।

सक्सेना—मीठा होने के साथ ही साथ कुछ कसायला भी है।

गोयल—इस उद्योग को अवश्य प्रोत्साहन मिलना चाहिए। कसायले पन को दूर हटाने के प्रयत्न भी होने चाहिएँ।

सम्पादक—इस गुड़ से आप हलवा, गजक, रेवड़ी, तिलसकरी, गुलगुले आदि सब तरह की मिठाइयाँ बना सकते हैं। इससे बढिया क़िस्म की चीनी व मिश्री भी बनाई जाती है।

सक्सेना—तो, क्या सम्पादकजी आप हमें इसकी चीनी व मिश्री के भी दर्शन करायेंगे?

**(सम्पादक दोनों के नमूने देते हैं।)**

सक्सेना—ग़ज़ब है भाई लोगो, ग़ज़ब, पण्डितजी ने तो आज हमें एक अनोखी दुनिया में ला खड़ा किया है। अच्छा तो अगले रविवार को भार्गव साहब भाभी साहब के हाथ से ताड़-गुड़ की मिठाइयाँ बना कर मित्रमण्डली का मनोरंजन करें। यही आज का प्रस्ताव है।

गोयल—मैं इसका समर्थन करता हूँ।

सम्पादक—क्यों भार्गव? अब तो यह प्रस्ताव पास हो रहा है।

**भार्गव**—लेकिन, मेरे पास ताड-गुड़ कहाँ है?

**सम्पादक**—इसकी चिन्ता मत करो, राजस्थान के ताड-गुड सघटक मेरे मित्र है. केवल ५) की मजूरी दे दो।

**भार्गव**—अच्छा तो यही सही। इस गुड की पूरी आज़माइश होगी और मनोरजन भी।

**सक्सेना**—इसका जनाव को धन्यवाद। पर अब चलो, (घडी की ओर देख कर) आज का दरबार बरखास्त किया, सवा दस हो गए। सम्पादक जी! जय हिन्द!

(चारों का प्रस्थान।)

पटाक्षेप

# साक्षी

# पात्र-परिचय

## पुरुष-पात्र

१. जेलर

२. साथी

## स्त्री-पात्र

१. क़ैदी (एक स्त्री)

# साथी

[स्थान—जेल की चारदीवारी में कैदियों के रहने की बैरक। समय-अर्द्धरात्रि। जेलर जेल का निरीक्षण करते हुए एक बैरक में प्रवेश करता है। बैरक में रहनेवाली एक बन्दिनी ठंड से काँपती हुई सहसा खड़ी हो जाती है]।

जेलर—क्यों, क्या ठंड लग रही है?

क़ैदी—ठंड भी कैदियों को ही अधिक सताती है।

जेलर—इस बैरक पर सूरज की एक भी किरण नहीं पड़ती। क्यों न आपका तबादला बैरक नं० १५ में कर दिया जाय? शायद, आपको तो इसमें कोई ऐतराज नहीं होगा?

क़ैदी—आपकी सहानुभूति के लिए धन्यवाद। पर, मैं इस बैरक को नहीं छोड़ना चाहती।

जेलर—मैं आपका तबादला 'ए' क्लास के कैदियों के रहने वाले कमरे में कर रहा हूँ।

क़ैदी—साहब, यदि आप मुझे सुखी देखना चाहते हैं तो, कृपया मेरा तबादला यहाँ से न करें। यहाँ की दीवारों में मैं घुल-मिल गई हूँ, यह जेल की 'सी' क्लास की बैरक भी मेरे लिए स्वर्गतुल्य बन गई है।

जेलर—मुझे आश्चर्य है! मैं नहीं जानता था कि

आपको इस बैरक से इतना मोह हो गया है। खैर, जैसी आपकी इच्छा....। यदि मेरे हाथ मे ही सब कुछ होता तो, आपको जेल की इस चारदीवारी से मुक्त करा कर इसी क्षण अपने गर्मागर्म कमरे मे ले चलता। अच्छा, फिर कल मिलेगे।

[जेलर मुस्कराहट के साथ कैदी पर कटाक्ष करता हुआ बाहर जाता है और क़ैदी गभीर मुद्रा से नीची दृष्टि कर लेती है। जमादार पुनः बैरक के ताला बन्द कर प्रस्थान करता है। क़ैदी चटाई पर टाट बिछाकर अपने कम्बल को दुबले-पतले शरीर से लपेटकर ठड से काँपती हुई बैठ जाती है और कुछ समय तक घुटनो में अपना सर रखकर चुप-चाप बैठी रहती है। फिर सहसा अपनी बैरक की दीवार से सटी हुई दूसरी बैरक के उजालदान की ओर मुँह घुमाकर किसी को पुकारती है। उजालदान इतना ऊँचा है कि वे एक-दूसरे को नहीं देख सकते]।

क़ैदी—साथी, साथी! साथी!! आज बोलते क्यो नही? साथी! अभी से सो गए। हाड-कम्पा देने वाली ठड है, हवा तीर की तरह हड्डियो मे चुभ रही है। पाँव ओले की तरह गल रहे है। भगवान् जानें, तुम्हे नीद कैसे आती है?

साथी—(दर्द भरी कराहट के साथ) आह! दिन भर चक्की पीसने वाले हाथो के छाले फोडे बन गए है।

उफ, गजब की टीस चल रही है, इन हाथों मे। जी चाहता है इन अँगुलियो को काट कर फेंक दूँ। रीढ की हड्डी तडक-तडक कर चूर-चूर होना चाहती है। आंख लगना तो दूर रहा, इस वर्फ-सी चटाई पर लेटा तक नही जाता।

क़ैदी—फिर डाक्टर ने क्या लिखा?

साथी—तीन दिन की छुट्टी की सिफारिश की है। हाँ, आज आपने जेलर की वात क्यों नही मानी?

क़ैदी—अपने दिल से पूछो।

साथी—(हँसकर) शायद, जेलर एक भला आदमी है?

क़ैदी—(झुँझला कर) जेलर का नाम मत लो। साथी! मुझे उसके नाम से ही घृणा होती है। अच्छा, साथी, यह तो बताओ, तुम काले हो या गोरे और तुम्हारी नाक कैसी है?

साथी—(खिलखिलाकर हँसता हुआ) बिलकुल काला-बवर्चीखाने के तवे जैसा और नाक चूहे के बिल जैसी, आधी कटी हुई। पर, यह तो बताओ, आप मोटी है या पतली?

क़ैदी—बिलकुल काली, भद्दी, मोटी, जैसे भैस। पर, इन बातो से तो मै डर गई, साथी—मेरा हृदय कांप उठा है। हाड-कम्पा देने वाली ठड, धाँय-धाँय करने वाली अर्द्धरात्रि, जेल की बैरक, काला, आधी नाक कटा हुआ एक भयकर पुरुष और काली, भद्दी, भैस जैसी स्त्री!

यह कौनसा नर्क दिखा रहे हो, साथी ? तुम्हे डर नही लगता, कितने कठोर हो ? निर्दयी !

**साथी**—अरे, आप डर गई। अच्छा तो सुनो, कश्मीरी स्त्रियो का सौंदर्य केसर की क्यारियो की तरह महकता है, वे मृगनयनी और गजगामिनी होती है।

**क़ैदी**—राजस्थानी भी तो बाँके जवान होते है, गौरे और सुडोल।

**साथी**—क्या यह चित्र पसन्द आ गया ?

**क़ैदी**—कवि कविता पढ रहा है, सुरम्य उद्यान मे केसर महक रही है। भला, इस दृश्य को कौन पसन्द नही करेगा। काश, मैं इस बैरक की दीवार को तोड सकती, तो इस साथी के छालो पर केसर का लेप अवश्य करती ?

**साथी**—खूब ! पर केसर की क्यारी, यह तो बताओ आप इस जजाल मे कैसे आ फँसी ?

**क़ैदी**—दुर्भाग्य से, एक प्रेमी के जीवन को बचाने के अपराध मे। डरना नही साथी, मै एक खून के अपराध मे जेल काट रही हूँ। पर कल्पना के सुनहले स्वप्नो में रमने वाले कविराज, आप इस जेल के सीखचो मे तड़फने कैसे आ टपके ?

**साथी**—भूल से समझ बैठा था कि आज़ादी मिल गई। विचार-स्वतत्रता और सत्य की बेडियाँ काट कर गरीबों की आवाज़ बुलन्द करने लगा। हडताले हुई, मिल ठप्प

थीं, रेलो के चक्के जाम हो गए और जनता की बुलन्द आवाज़ से आकाश फटने लगा। अवसरवादी सफेदपोश घबरा उठे, उनकी कुर्सियाँ उलटने लगी और मोटे पेट का पानी सूख गया। बस, फिर क्या था, अंग्रेज़ो का-सा दमन-चक्र चला, विचार-स्वतंत्रता का गला घोट दिया गया और सत्य के हाथो मे हथकड़ियाँ और पैरो मे बेड़ियाँ डाल दी गई। डरना नही कैदी, आज मै एक भयकर राजद्रोही हूँ। हाँ, पर आपने आज तक यह नही बताया कि आपका नाम और ग्राम क्या है? आप शहरी है या देहाती?

**क़ैदी**—यह सब कुछ पूछ कर आप क्या करेंगे? दो दिन का रैन-बसेरा है। कभी हम भी स्वच्छन्द पक्षी की तरह खुले आकाश मे फिर से उड़ने लगेंगे। बहुत दूर—एक दूसरे से बहुत दूर।

**साथी**—कैदी, क्षमा करना, मै कुछ और ही समझ बैठा था।

**[सहसा साथी की बैरक का ताला खुलता है और जेलर मय जमादार और सन्तरी के बैरक में प्रवेश करता है। उनके साथ एक तेज लालटेन है। साथी अचंभा करके मूर्ति-सा खड़ा रहता है और चकित होकर जेलर की ओर देखता है]।**

**जेलर**—क्यो हज़रत, क्या जेल मे भी प्लॉट और षड्यन्त्र चल रहे है? आप इस खूनी स्त्री के साथ जेल तोड़ना चाहते है? जानते हो, ऐसे षडयन्त्रो की यहाँ क्या

इनाम मिलती है? दो दर्जन भीगी हुई बेंत! वह भी आधी रात मे। आइए, तशरीफ लाइए। जमादार, इस राजद्रोही को न० ५ की बैरक मे बन्द कर दो।

**(पास की कोठरी से एक दर्दभरी पुकार उठती है)**

**क़ैदी**—जेलर, तुम साथी को कहाँ ले जा रहे हो? भगवान् के नाम पर साथी को यहाँ से न ले जाओ, जेलर!

**जेलर**—चुप रहो रमा, यह खाला का घर नही है। जानती हो, इसका नाम जेल है, जेल।

**साथी**—रमा, दो दिन का रैन-बसेरा है... विदा ... चलो जमादार, किधर ले चलते हो? **(जमादार के साथ उदास साथी प्रस्थान करता है, उधर पास की बैरक से एक चीख के साथ भयंकर आर्तनाद और धमाका सुनाई पड़ता है। जेलर क़ैदी की बैरक में प्रवेशकर स्तम्भित रह जाता है। क़ैदी बेहोश पड़ी है और उसके सर से खून बह रहा है)।**

**जेलर**—ओह, रमा, मुझे क्या मालूम कि बात यहाँ तक बढ़ चुकी है? सन्तरी, भगो, डाक्टर को तुरत लाओ **(उदास जेलर क़ैदी के सर को अपनी गोद में रखकर अपने हाथो से खून रोकते हैं)।**

**पटाक्षेप**

# हृदय-परिवर्तन

# पात्र-परिचय

## पुरुष-पात्र

१ स्थानिक

२ आचार्य

३ महाभिक्षु

४. अशोक

५. (सब)

# हृदय-परिवर्तन

## प्रथम दृश्य

(स्थान---बौद्ध मठ)।

**स्थानिक**—मठवासियो की सख्या प्रतिदिन बढती जा रही है, महाभिक्षु!

**आचार्य**—यह तो बड़े हर्ष की बात है। जितनी सख्या बढेगी उतना ही मानवता की सेवा करने का हमे पुण्य अवसर प्राप्त होगा।

**स्थानिक**—किन्तु . . (रुक जाता है)

**आचार्य**—हाँ, किन्तु क्या? ठहर क्यो गये स्थानिक। निरापद भिक्षु को भावी आशकाओ से क्षुब्ध नही होना चाहिये।

**स्थानिक**—कलिग के परास्त नरेश के साथ आज प्राय २,००० व्यक्तियो का मठ मे प्रवेश हुआ है। उन्हे भोजन कहाँ से दिया जावे?

**आचार्य**—क्यो? क्या सुरक्षित अन्नकोष समाप्त हो गया?

**स्थानिक**—जी हाँ, यही नही, हमारे मठ मे आने वाले २०० अन्न दानो को मार्ग मे ही दस्युओ ने लूट लिया है।

**महाभिक्षु**—अस्तु। तुम जाओ। मै इस समस्या को हल करने के उपाय को सोचने के लिये एकान्त चाहता हूँ। (स्थानिक का बाहर जाना)

(बाहर घोड़ों की टापों का स्वर और जनरव)

'जला दो इस आम्रवन को, नष्ट कर दो इस मठ को, पकड़ लो कलिंग नरेश को'—

(सैनिक महाभिक्षु को घसीटकर मठद्वार पर ले जाते हैं)।

**अशोक**—हमारे परास्त शत्रु कलिंग नरेश को लौटा दो भिक्षु ! उन्हे तुम्हारे मठ मे शरण मिली है।

**महाभिक्षु**—बौद्धिसत्व किसी को शत्रु नही मानता और न किसी का इसलिये स्वागत करता कि वह नरेश है। उसका तो आराध्य और सेव्य है केवल मानव।

**अशोक**—बडे प्रगल्भ हो भिक्षु. . . ।

**महाभिक्षु**—यह तुम्हारा भ्रम है मानव।

**अशोक**—जानते हो ? तुम्हारे सम्मुख कौन खड़ा है और राजकीय नियमों के उलघन करने का क्या परिणाम होता है ?

**महाभिक्षु**—(हँसकर) मै अच्छी तरह जानता हूँ कि मेरे सम्मुख एक महाभाग खड़ा है। एक ऐसा महाभाग ! जिसके शस्त्रो के प्रहार ने भिक्षुओं को सतप्त मानवों की सेवा करने का पावन अवसर प्रदान किया है। मै यह भी जानता हूँ सैनिक ! कि राजकीय नियमो के उलघन का

परिणाम है मृत्यु। किन्तु जानते हो सैनिक! भिक्षु मृत्यु मे विश्वास नही करता। अमरत्व ही उसका आराध्य है।

अशोक—मै यह प्रस्ताव सुनने नही आया। लौटा, मुझे मेरा शत्रु कलिंग नरेश।

महाभिक्षु—यह असम्भव है।

अशोक—मै तुम्हारे मठ को भस्मिभूत कर दूंगा।

महाभिक्षु—तुम्हारे जैसा दुर्बल आत्मा वाला आदमी ऐसा नही कर सकेगा।

एक और सैनिक—अरे! मूर्ख! क्या बकता है? चक्रवर्ती सम्राट अशोक तुमसे बाते कर रहे है।

महाभिक्षु—यह तो और भी अच्छा है (कुछ देर सोच कर) अच्छा! ठहरो, मै तुम्हे समस्त मठवासियो के दर्शन कराता हूं। स्वयं देख लो कि क्या कोई अब भी तुम्हारा शत्रु है और कोई नरेश भी यहां रहता है?

अशोक—हमें तुम्हारा प्रस्ताव स्वीकार है।

महाभिक्षु—मुख्य स्थानिक! अशोक को मठवासियो के दर्शन कराओ।

स्थानिक—जो आज्ञा गुरुदेव!

**(परदा उठता है)**

महाभिक्षु—(कुछ क्षत-विक्षत शिशुओ की ओर इशारा करके) देखो अशोक, देखो, इन क्षतविक्षत बालको को।

इन्हे हमारे भिक्षुओ ने रणक्षेत्र से प्राप्त किया है। इन भोले-भाले बालको की माताओं के स्तनो को तुम्हारे निर्भय सैनिको ने काट डाला, उन्हे नग्न कर उन पर अत्याचार किया और फिर उन माताओ की सतृष्ण आँखो के सामने उनके हृदय के ुकडे इन बालको को बुरी तरह घायल कर फेक दिया। इन भोले-भाले बालको की डबडबाई आँखे तुमसे पूछ रही है अशोक ! कि हमने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था ? क्या हम तुम्हारे शत्रु है ?

अशोक—(आतुर होकर) बस, बस, रहने दो आगे बढ़ो।

महाभिक्षु—ये है कलिंग देश की कुल वधुएँ। तुम्हारी क्रूरता ने इनके माँग का सिदूर सदा के लिये पोछ डाला। ये कलियाँ विकसित होने से पूर्व ही कुचल दी गई। इनके हृदय की भावनाओ को तृप्त होने से पहले ही मर्दन कर डाला गया। इनकी सुनहली कल्पनाएँ सदा के लिए ध्वस्त हो गई। सुनो ! इनके मूक हृदय का चीत्कार। सुना तुमने ! वह कह रहा है—अरे आततायी तूने हमारे सर्वस्व पर डाका डाला है। परन्तु स्मरण रख, हम भारतीय ललनाओ के हृदय की वेदनाओ की ज्वाला अत्याचार की आधार-शिला पर टिके तेरे समस्त साम्राज्य को स्वाहा कर डालेगी और—

अशोक—आगे बढो भिक्षु सुसे आगे मै नही सुनना चाहता।

**महाभिक्षु**—ये है तुम्हारी साम्राज्य लिप्सा के शिकार कलिंग निवासी ! इनके कांपते हुए ओठो की ओर देखो। इनकी भृकुटि पर पडी हुई रेखाओ के अध्ययन करने का प्रयत्न करो।

ये शासक है। ये कृषक है। वे है व्यवसायी, कलाकार और साहित्यकार। ये काँपते हुए होठ, भृकुटि पर पड़ी हुई रेखाएँ इनके हृदय की क्षुब्ध भावनाओ का प्रकाशन है। ये कह रही है अरे ! साम्राज्य लिप्सु ! तुझे देश की शांति और व्यवस्था नष्ट करने मे क्या सुख मिला ? शस्यश्यामला वसुन्धरा पर लहलहाते हुए खेतो को नष्ट करने मे तुझे कौनसा गौरव प्राप्त हुआ ? देश के वाणिज्य और व्यवसाय को नष्ट कर दरिद्रता को बढाने मे तुझे कौनसा यश मिला। मूर्ख ! युग-युग से संचित सभ्यता, संस्कृति और साहित्य को नष्ट करने का तुझे क्या अधिकार था ? इन्हे नष्ट कर बर्बरता को उत्पन्न करने मे क्या तुझे शांति मिलती है ? आततायी ! अन्याई ! बर्बर दस्यु ! तुझे धिक्कार है, धिक्कार है !

**अशोक**—ओह ! क्षमा करो महाभिक्षु मैं वस्तुत. आततायी, अन्याई और हिंसक दस्यु हूँ ! मुझे धिक्कार है। मैंने बहुत बडा पाप किया है। मै इसका प्रायश्चित करूँगा, महाभिक्षु ! अवश्य प्रायश्चित करूँगा।

माताओ ! बहनो ! भाइयो भारत के भावी नाग-

ङ्गिको ! मुझे क्षमा करो। मैं भूला हुआ था। अहो ! मैंने तुम्हारे साथ कितना भयंकर अत्याचार किया है ?

(अपने हाथ से शस्त्र फेंक कर)

मुझे तुम्हारी आवश्यकता नहीं ? मुझे ऐसे साम्राज्य की लालसा नहीं, जिसकी नींव मानव के नाश और हिंसा पर हो। मुझे उस समय तक शान्ति नहीं जब तक कि मैं भारत की खोई हुई विश्व कल्याणमयी संस्कृति को पुनर्जीवित न कर दूँ। अहिंसा और प्रेम का संदेश द्वेष और वैमनस्य सतप्त विश्व में न फैला दूँ। बोधिसत्व ! कलिंग-निवासियो ! मैं शपथपूर्वक आपके सम्मुख प्रतिज्ञा करता हूँ कि आजसे मैं भी एक भिक्षु की भांति देश की गली-गली और कूँचे-कूँचे में घूम कर विश्व के वायुमंडल को प्रेम, अहिंसा, सत्य, और सेवा की पवित्र भावनाओं से भरने का प्रयत्न करूँगा। प्रेम मेरा साम्राज्य होगा, विश्व कुटुम्बवत् ।

महाभिक्षु—अशोक, तुम धन्य हो।

अशोक—(अपने राजकीय वस्त्र उतारकर) मुझे दीक्षा दो बोधिसत्व ! (भँगवा वस्त्र पहनाये जाते हैं)

महाभिक्षु—बोलो, संघं शरण गच्छामि....

अशोक—सघं शरणं गच्छामि।

महाभिक्षु—बुद्ध शरण गच्छामि।

अशोक—बुद्धं शरणं गच्छामि।

महाभिक्षु—धर्मं शरण गच्छामि।

**अशोक**—धर्म शरण गच्छामि।

**महाभिक्षु**—तुम अपने सकल्प मे सफल हो नवदीक्षित भिक्षु! यही मेरा आशीर्वाद है।

**अशोक**—(प्रार्थना करते हुए धीरे-धीरे जाता है)

तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मामृत गमय।
असतो मा सद गमय।

(जय-जयकार)

**सब**—प्रिय दर्शिन अशोक की जय!
महाभिक्षु अशोक की जय!!
अहिंसा और प्रेम अमर है।

(पटाक्षेप)